महामाया तंत्र

अनुवादक :- एस. एन. खण्डेलवाल

भारतीय विद्या संस्थान
वाराणसी

महामायातन्त्रम्

(मूल एवं भाषानुवाद)

अनुवादक
एस० एन० खण्डेलवाल

भारतीय विद्या संस्थान
प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता
वाराणसी

प्रकाशक
भारतीय विद्या संस्थान
प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता
सी० २७/५९, जगतगंज
वाराणसी २२१००२

प्रथम संस्करण १९९६

मूल्य 50/-

मुद्रक
हिमालय प्रेस
एस० ८/१९५ सुधाकर रोड
खजुरी, वाराणसी

निवेदन

महामायातन्त्र वास्तव में १४ पटलों में ही सीमित नहीं है, परन्तु इसका स्वरूप अत्यन्त विस्तृत कहा जाता है। सम्प्रति इसके मात्र १४ पटल ही उपलब्ध हो सके हैं, जिनका अनुवाद के साथ प्रकाशन किया जा रहा है।

इस ग्रंथ में १२वें पटल से पशु-दिव्य तथा वीरभाव का वर्णन प्रारम्भ करके रहस्य साधना का किंचित उद्घाटन किया गया है। इसके पश्चात् १३वें तथा १४वें पटल में पूर्णत: अन्य विषय भुवनेश्वरी कवच विधान तथा चण्डीपाठ की विधि वर्णित है। इससे प्रतीत होता है कि १२वें पटल से ही इसका विषयवस्तुगत तारतम्य खण्डित हो गया है और जिसे रहस्य साधना का वर्णन करते हुए १२वें पटल से विषय वस्तु को और विस्तृत करना था, वह अंश लुप्त हो गया और १३वां तथा १४वां पटल कलान्तर मूलग्रंथ लेखन के बहुत बाद इसमें संयोजित कर दिया गया। यह गवेषणा का विषय है। फिर भी जो कुछ साधना प्रक्रिया इस ग्रंथ में अंकित है, वह साधक समाज का मार्गदर्शन कर सकेगी यह निःसंदिग्ध है।

जन्माष्टमी–१९९६ ई०
बी ३१/३२ लंका वाराणसी

निवेदक
एस. एन. खण्डेलवाल

विषयानुक्रमणिका

		प्र० सं
प्रथम पटल	....	१
द्वितीय पटल	....	६
तृतीय पटल	....	१३
चतुर्थ पटल	....	२२
पंचम पटल	....	२८
षष्ट पटल	...	३३
सप्तम पटल	....	३९
अष्टम् पटल	....	४६
नवम पटल	....	५५
दशम पटल	....	६१
एकादश पटल	....	६३
द्वादश पटल	....	६६
त्रयोदश पटल	....	७३

॥ ॐ नमः परमदेवतायै ॥ ॐ नमो दुर्गायै ॥

महामायातन्त्रम्

अथ प्रथमः पटलः

श्री ईश्वर उवाच

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि तत्वमन्यद् यथा पुरा।
तोयव्याप्ते तु सर्वत्र स्वर्गे मर्त्ये रसातले ॥१॥
विश्वे चैकार्णवीभूते न सुरासुरमानवाः।
नैव क्षिति र्नवा किञ्चित्तोयमात्रावशेषिताः ॥२॥
तदा विश्वम्भरो देवः सिसृक्षुः समजायत।
ध्यात्वा स्वर्गादिसमये मायां सस्मार च प्रभुः ॥३॥

शिवरूप ईश्वर कहते है—हे देवि ! प्राचीन काल में जो घटित हुआ था, उसके तत्व का श्रवण करो। स्वर्ग, मृत्युलोक, रसातल प्रभृति सत्ता जल द्वारा परिव्याप्त थी। उस समय समग्र विश्व एकार्णवीभूत हो गया था। देवगण, असुरगण अथवा मानव का कोई अस्तित्व ही नहीं था। समस्त पृथ्वी अथवा अन्य किसी वस्तु का कोई अस्तित्व ही नहीं था। केवल जल ही जल अवशिष्ट था। इस स्थिति में विश्वम्भर भगवान् ने सृष्टि करने की इच्छा किया। अतः उस जल के मध्य में स्वर्गादि लोकसमूह का सृजन करने की इच्छा करते हुए प्रभु ने माया का स्मरण किया ॥१-३॥

तदा वटदलं भूत्वा तोयान्ते समवस्थितम्।
ततो नारायणं देवं सा दधार स्वलीलया ॥४॥

उस समय प्रभु ने वटपत्र रूप से उस अगाध जलराशि के उपरितन भाग पर भासित होकर अवस्थान किया। माया का स्मरण करते हुए यह घटित हुआ कि माया ने नारायण को तक्षण धारण किया। यह उनकी लीला है ॥४॥

विचचार तदा तोये स्वेच्छाचारः स्वयं प्रभुः।
विचरन्तं वटतले तोयेषु परमेश्वरम् ॥५॥
वटवृक्षस्थितस्तत्र मार्कण्डेयो महामुनिः।
ददर्श परमेशानं शिवमव्यक्तरूपिणम्।
तुष्टाव स तदा हृष्टो मुनिः परमकारणम् ॥६॥

तदनन्तर प्रभु नारायण स्वेच्छा से ही इस जल के ऊपर भ्रमण करते-करते उसी जल पर वटवृक्ष तल में भी विचरण करने लगे। इस वटवृक्ष में महामुनि मार्कण्डेय अवस्थान कर रहे थे। अव्यक्त रूपी परम ईशान शिव का दर्शन करके महामुनि ने उन परम कारण महाप्रभु का स्तवन किया ॥५-६॥

नमस्ते देव देवेश सृष्टिस्थित्यन्तकारक।
ज्योतिरूपाय विश्वाय विश्वकारणहेतवे ॥७॥
निर्गुणाय गुणवते गुणभूताय ते नमः।
केवलाय विशुद्धाय विशुद्धज्ञानहेतवे ॥८॥
मायाधाराय मायेशरूपाय परमात्मने।
नमः प्रकृतिरूपाय पुरुषायेश्वराय च ॥९॥

महामुनि कहते हैं—हे देव-देवेश! आप सृष्टि-स्थिति तथा संहारकारी हैं, आपको नमस्कार है। आप ज्योतिरूपी, विश्वरूपी तथा विश्वकारण हेतु हैं। आप निर्गुण होने पर भी सगुण हैं। गुणसमूह के कारणरूपी आपको नमस्कार है! आप केवल शुद्धसत्तात्मक हैं तथा विशुद्ध ज्ञान के हेतु हैं। आप मायाधारी तथा माया के ईश्वर परमात्मा हैं। आपको नमस्कार है! आप ही प्रकृतिरूपी, पुरुष रूपी हैं तथा प्रकृति एवं पुरुष के ईश्वर हैं, आपको नमस्कार है ॥७-९॥

गुणत्रयविभागाय ब्रह्मविष्णुशिवाय च।
नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ॥१०॥

मायायै परमेशान्यै मोहिन्यै ते नमो नमः ।
ज्ञानिनां ज्ञानरूपायै प्रकाशायै नमो नमः ॥११॥

जगदाधार-रूपायैः जगतां त्राणहेतवे ।
प्रसन्नोऽसि महामाये विश्वमूर्त्तिं विधीयताम् ॥१२॥

मुनि कहते हैं—हे देव देवेश ! गुणत्रय विभाग से आप ही ब्रह्मा, विष्णु एवं शिवरूप का परिग्रहण करते हैं । देवीरूपिणी, महादेवीरूपिणी शिवा को सतत् नमस्कार ! आप ही मायारूपिणी, परमेशानी तथा मोहनीरूपिणी हैं, आपको पुनः-पुनः नमस्कार है ! आप ज्ञानियों में ज्ञानरूपिणी हैं तथा जगत् को प्रकाशित करने वाली हैं । आपको पुनः-पुनः नमस्कार है ! आप जगत की आधार रूपिणी तथा प्राणरूपिणी हैं । हे महामाये ! आप मेरे प्रति प्रसन्न हों । मुझे विश्वमूर्ति का दर्शन करायें ॥१०-१२॥

इति स्तुत्वा मुनिस्तत्र विरराम सुसंयतः ।
कृतांजलिपुटो भूत्वा दण्डवत् प्रणिपत्य च ॥१३॥
तत् उत्थाय देवेशं नाभिपद्मसमुद्भवम् ।
रक्तवर्णं चतुर्व्वक्त्रं ददर्श परमं शिशुम् ॥१४॥
सृष्टौ नियोजयामास तं ब्रह्माणं सुरेश्वरः ॥१५॥
ध्यात्वा ब्रह्मा तदा तत्र सप्तर्षीन् परमेश्वरि ॥१६॥
जनयामास सनकान् मानसास्ते ततः प्रिये ।
बिना शक्तिं न शक्तास्ते सृष्टिं कर्त्तुं महेश्वराः ॥१७॥

अब कृतांजलि स्थिति में मुनिवर मार्कण्डेय उक्त रूप से स्तव करते हुए नीरव हो गये । तदनन्तर जब दण्डवत् करके उठे, तभी उनको परम कारणरूपी परमेश्वर के नाभिजात पद्म से समुद्भूत चतुर्वक्त्र, रक्तवर्ण एक परम शिशु का दर्शन हुआ । ये सृष्टिकर्ता सुरेश्वर ब्रह्मा थे । परमेश्वर ने इन्हें सृष्टिकार्य में नियुक्त किया । हे परमेश्वरी ! उस समय ब्रह्मा ने सात ऋषियों की सृष्टि करने की कल्पना

करके, अपने मानस से सनकादि ऋषियों की सृष्टि किया। ये सभी महातपा ऋषिगण शक्तियुक्त नहीं थे। अतः कोई भी ऋषि सृष्टि करने में समर्थ नहीं हो सका ॥१३-१७॥

योनौ सृष्टिरतो ज्ञेया ततो योनिमकल्पयत् ।
ततः कश्यपनामानं मुनिं पुनरजीजनत् ॥१८॥

पुनः सृष्टौ च तं पुत्रं ब्रह्मा प्रोवाच यत्नतः ।
जनयामास च कन्या रूपयौवनसमन्विताः ॥१९॥

नियोज्य मुनये तास्तु ब्रह्मा प्रोवाच सृष्टये ।
नानायोन्याकृतास्तासु समस्ता जीवजातयः ॥२०॥

शक्ति से सृष्टि का आरम्भ होता है, यह जानकर ब्रह्मा ने शक्ति की कल्पना किया। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने पुनः कश्यप नामक मुनि का सृजन किया। इसी के साथ एक रूपयौवन सम्पन्ना कन्या का सृजन किया। यह कन्या मुनि को प्रदान करते हुए उसे प्रजा सृष्टि करने की आज्ञा दी। तत्पश्चात् प्रजापति ने विभिन्न शक्तिजात समस्त जीवगण की तथा स्त्री-पुरुष की सृष्टि किया ॥१८-२० ॥

उत्पादयामास तदा प्रजापतिरखण्डितः ।
ततो नारायणो देवस्तुष्टौ मायामुवाच ह ॥२१॥

वटपत्रस्वरूपा त्वं यतो मां विधृताम्भसि ।
अतो धर्मस्वरूपासि जगत्यस्मिन् सनातनी ॥२२॥

उस समय नारायण ने प्रीति भरे शब्दों में माया से कहा "हे सनातनी ! वटपत्ररूप में तुमने मुझे जिस प्रकार से जलराशि के ऊपर धारण किया था, उसी प्रकार तुम धर्मस्वरूपा होकर जगत को धारण करो।

मंत्रमाराधने चास्याः प्रवक्ष्यामि शृणु प्रिये ।
नावेन्दुसंयुतं वान्तं धर्माय हृच्च तत् परम् ॥२३॥

षडक्षरो महामंत्रो धर्मस्याराधने मतः ।
यत् कामं समनुद्दिश्य पूजयिष्यन्ति मानवाः ॥२४॥

हे प्रिये ! मनुष्य लोक में सर्व कामफल प्रदायिनी एवं धर्मस्वरूपिणी महा-माया का यह मंत्र तथा आराधना पद्धति सुनो। 'धं धर्माय नमः' इस षडक्षर महामंत्र को धर्मरूपा माया का मंत्र कहते हैं। मनुष्य जिस किसी भी कामना को लेकर इस महामंत्र की साधना करेंगे, वह कामना स्वल्पकाल में काम्यविषय प्राप्ति के रूप में फलीभूत होगी ॥२३-२४॥

अचिरादेव लप्स्यन्ति सर्वकामं न संशयः।
एवं ते कथितं देवि यथासम्भवविस्तरात् ॥२५॥

न कस्मैचित् प्रवक्तव्यम् किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥२६॥

हे प्रिये ! मैंनें मनुष्य लोक में सर्वकाम प्रदायिनी एवं धर्मस्वरूपिणी माया का यह मंत्र तथा इसकी पद्धति को कहा। इससे स्वल्पकाल में सभी कामनायें पूर्ण हो जाती है। हे देवि ! मैंने यथासम्भव विस्तार से तुमसे इसे कहा है। इसे किसी के सम्मुख व्यक्त नहीं करना। अब अन्य कुछ जानने की इच्छा हो तो उसे कहो ॥२५-२६॥

॥ इति महामायातन्त्रे प्रथमः पटलः ॥

अथ द्वितीयः पटलः

[महामायायाः विविधमन्त्राः]

देव्युवाच

कथयेशान सर्वज्ञ यतोऽहं तव वल्लभा ।
ब्रूयुः स्निग्धाय शिष्याय गुरवो गुह्यमप्युत ॥१॥

आराधनन्तु मायायाः कथय स्वानुकम्पया ।
येन लोकास्तरिष्यन्ति महामोहात् सुरेश्वरः ॥२॥

देवी कहती हैं—हे सुरेश्वर ! हे ईशान ! आप सर्वज्ञ हैं । यदि मैं आपकी प्रिय हूँ, तब जिसके द्वारा मानवगण भव समुद्र से उत्तीर्ण हो जाते हैं, उस आराधना पद्धति का उपदेश करें जो अतिशय गोपनीय होने पर भी आप अपने शिष्य को समझा सकते हैं ॥१-२॥

ईश्वर उवाच

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि तस्या आराधनं महत् ।
या चिच्छक्तिः सैव माया सा दुर्गा परिचक्ष्यते ॥३॥

या दुर्गा सा महाकाली तारिणी च महेश्वरी ।
अन्नपूर्णा च सा माया गृहिणां कल्पशाखिनी ॥४॥

भोगमोक्षप्रदा देवी तस्मात् पूर्णेति चक्ष्यते ।
माया गुणमयी देवी निर्गुणानां चिदात्मिका ॥५॥

यदि सा बहुभिः पुण्यैः प्रसीदति जनान् प्रति ।
तवैव कृतकृत्यास्ते संसाराच्च बहिष्कृताः ॥६॥

शंकर कहते हैं—हे देवि ! मैं उन महामाया की महत् आराधना पद्धति का वर्णन करता हूँ, उसका श्रवण करो । वे चित्शक्ति (शक्ति) हैं, वे माया हैं

एवं वे ही दुर्गा कहलाती हैं। जो दुर्गा हैं, वे काली हैं, वे तारिणी हैं। वे ही महेश्वरी तथा अन्नपूर्णा हैं। ये ही मानव समूह के लिए कल्पतरु हैं। वे भोग-मोक्ष प्रदायिनी हैं। उन्हें पूर्णा नाम से अभिहित किया जाता है। माया गुणमयी होने पर भी निर्गुण हैं। वे चित्स्वरूपा हैं। यदि वे पुण्य के फल से किसी पर अनुग्रह करती हैं, उस स्थिति में उसे कृतार्थ करती हैं तथा संसार बन्धन से मुक्त कर देती हैं ॥३-६॥

दुरन्ताचारा सा माया मुनिनामपि मोहिनी।
श्रीकृष्णं मोहयामास राधा गोकुलसंस्थिता ॥७॥
स चैव देवकीपुत्रस्तामाराध्य निरन्तरम्।
प्रकृत्याचार निरतो ज्ञानानादेशयत् प्रभुः ॥८॥

मायारूपिणी आद्याशक्ति अत्यन्त दुरन्ताचारिणी हैं, और वे मुनिगण को भी मोहित कर देती हैं। राधा ने गोकुल में अवस्थान करके श्रीकृष्ण को मोहित किया था। लोक एवं देवसमूहाधीश्वर देवकी पुत्र भी प्रकृत्याचार में निरत रहकर श्री राधारुपिणी माया की निरन्तर आराधना करते रहते हैं ॥७-८॥

अस्या मन्त्रं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलानने।
शिवो वन्हिसमारुढो वामनेत्रेन्दु-भूषितः ॥९॥
एषा तु परमा विद्या देवैरपि सुदुर्लभा।
ऋषिर्ब्रह्मास्य मंत्रस्य त्वनुष्टुप छन्द उदाहृतम् ॥१०॥
देवता मुनिभिः प्रोक्ता माया श्रीभुवनेश्वरी।
चतुर्वर्गेषु मेधावी विनियोगः प्रकीर्त्तितः ॥११॥

हे कमलानने! मैं उसी माया मंत्र का वर्णन करता हूँ। श्रवण करो। शिव (ह), वन्हि (र), वामनेत्र (ई), एवं इन्दु (ँ) से युक्त विद्या का अर्थात् ह्रीं मंत्र का जाप सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। यह देवदुर्लभ मंत्र है। मुनिगण कहते हैं कि इस मंत्र के ऋषि ब्रह्मा हैं, छन्द अनुष्टुप है (अन्य मतान्तर से त्रिष्टुप भी है) तथा माया रूपिणी श्री भुवनेश्वरी इस मंत्र की देवता हैं। धर्म, अर्थ, काम मोक्ष रूपी चतुर्वर्ग इस साधना का प्रयोज्य है ॥९-११॥

अंगानि मायया न्यस्य ध्यायेद्देवीं चतुर्भुजाम् ।
रक्तवर्णां पद्मसंस्थां नानालंकारभूषिताम् ॥१२॥

पट्टवस्त्रपरिधानां कलमंञ्जीर रंञ्जिनीम् ।
हारकेयूर वलय-प्रवाल-परिशोभिताम् ॥१३॥

अर्धेन्दुशेखरां बालां नयन त्रितयान्विताम् ।
एवं ध्यात्वा महामाया-मुपचारैः समर्चयेत् ॥१४॥

गुरु प्रणम्य विधिवत् गृह्णीयात् परमं मनुम् ।
ततो देवीं प्रसाद्यैवं कृतकृत्यो भवेत् सुधीः ॥१५॥

मायाबीज के द्वारा करन्यास करे । करन्यास—अंगन्यास इस प्रकार करें—

ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्ज्जनिभ्यां स्वाहा, ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट् । ह्रैं अनामिकाभ्यां हुम् । ह्रौं कनिष्टिकाभ्यां वौषट् । ह्रः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट् ।

मायाबीज के द्वारा अंगन्यास करे, यथा—

ह्रां हृदयायनमः । ह्रीं शिरसे स्वाहा । ह्रूं शिखायैवषट् । ह्रैं कवचाय हुम् । ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ह्रः करतल पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट् ।

करन्यास तथा अंगन्यास के पूर्व मातृकान्यास सम्पन्न करे ।

तदनन्तर चतुर्भुजा महामाया का ध्यान करे । देवी रक्तवर्णा हैं । वे पद्मासन में आसीन हैं, नानालंकार, भूषिता, पट्टवस्त्रपरिधाना, कमलबीजरंजिनी हार केयूर वलया परिशोभिता, बाला, अर्द्धेन्दुशेखरा तथा त्रिनयना हैं । देवी का इस प्रकार ध्यान करके यथाविधि उपचारार्चना करे । सर्वप्रथम गुरु को प्रणाम करके यथाविधि नियमपूर्वक इस महामंत्र की दीक्षा ले । इसके जाप से देवी की कृपा से साधक कृतकृत्य हो जाता है ॥१२-१५॥

अथ दुर्गा मनुः

अथ दुर्गामनुं वक्ष्ये शृणुष्व कमलानने ।
यस्या प्रसादमासाद्य भवेत् गंगाधरः स्वयम् ॥१६॥

थान्तं बीजं समुद्धृत्य वामकर्ण विभूषितम् ।
इन्दुविन्दुसमायुक्तं बीजं परमदुर्लभं ॥१७॥

चतुर्वर्ग-प्रदं साक्षान्महापातकनाशनम् ।
एकाक्षरीसमा नास्ति विद्या त्रिभुवने प्रिये ॥१८॥

बिना गन्धै बिना पुष्पै बिना होमपुरःसरैः ।
बिना न्यासै महादेवी जपमात्रेण सिद्धिगा ॥१९॥

नारदोऽस्य ऋषिर्देवी गायत्रीच्छन्द ईरितम् ।
देवता च जगद्धात्री दुर्गा दुर्गतिनाशिनी ॥२०॥

थान्तबीज (द), वामकर्ण (ऊ) एवं इन्दुविन्दु (ँ) युक्त परमदुर्लभ, चतुर्वर्गफल-प्रद, साक्षात् महापातकनाशक एकाक्षर दूँ बीज है। यह चतुर्वगफलदायक, साक्षात्-महापातक नाशक एकाक्षरी मंत्र कहा गया है। इसके समान अन्य कोई भी बीज नहीं है। त्रिभुवनेश्वरी का यह मंत्र अद्वितीय है। यह मंत्र केवलमात्र जप से सिद्ध होता है। इसके लिये किसी प्रकार के गंध. पुष्प, क्षेत्र, न्यास आदि की आवश्यकता ही नहीं है। हे देवि। इस मंत्र के ऋषि नारद हैं। गायत्री छन्द है तथा दुर्गतिनाशिनी जगद्धात्री दुर्गा इसको देवता हैं ॥१६-२०॥

चतुर्वर्गप्रदा दुर्गा सर्वसत्वेषु संस्थिता ।
विविधा सा महाविद्या तच्छृणुष्व गणेश्वरी ॥२१॥

कूर्च्चाद्यां वा जपेद्विद्यां तदन्ते वन्हिसुन्दरी ।
लज्जाद्यां वा जपेद्विद्यां फडन्तां वा जपेत सुधिः ॥२२॥

चतुर्वर्गप्रदा दुर्गा सर्वभूतसमूह में विराजित रहती हैं। हे गणेश्वरी! उनके विविध महामंत्रों का श्रवण करो। यथा ह्रं दूँ स्वाहा, ह्रीं दूँ फट, स्त्रीं दूँ स्वाहा, श्रीं दूँ स्वाहा, ऐं दूँ स्वाहा, ॐ दूँ स्वाहा, क्लीं दूँ फट्। स्वयं पद्मयोनि ने इन मंत्रों को कहा है। सुधी साधारगण को इसका जप करना चाहिये ॥२१,२२॥

वधूबीजयुतां वापि स्वाहान्तां प्रजपेत् कृती ।
लक्षाद्यां वा जपेद्विद्यां चतुर्वर्गफलाप्तये ॥२३॥

वाग्भवाद्यां जपेद्विद्यां प्रणवाद्यां जपेत्तथा।
कामबीजादिकां वापि फडन्तां वा जपेत् पुनः ॥२४॥

एवं सा त्र्यक्षरी विद्या कथिता पद्मयोनिना।
दीर्घषट्कसमायुक्तं निजबीजानि पार्वती ॥२५॥

विन्यसेदात्मनो देहे हृदयादिषु शाम्भवी।
ध्यानमस्याः प्रवक्ष्यामि शृणु पर्वतनन्दिनी ॥२६॥

हे पार्वती ! हे शाम्भवी ! दुर्गा के स्वबीज "दूँ" के साथ दीर्घषट्क अर्थात् आं, ईं, ऊं, ऐं, औं तथा अः का संयोग कर देने से तथा हृदय न्यास करने से उत्तम फल होता है। यथा:—

मातृकान्यास—मातृकान्यास के ब्रह्माऋषि हैं, गायत्री छन्द है। मातृका सरस्वती देवी देवता हैं। व्यंजनवर्ण बीज है। स्वरवर्ण शक्ति है। विसर्ग कीलक है। ऋषिन्यास करके उसके पश्चात् करन्यास एवं अंगन्यास करना चाहिये। अं कं खं गं घं ङं आं। इं चं छं जं झं ञं ईं। उं टं ठं डं ढं णं ऊं। एं तं थं दं धं नं ऐं। ओं पं फं बं भं मं औं। अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः।

पूर्वोक्त एक-एक मंत्र का उच्चारण करके तदनन्तर यथाक्रमेण दां अंगुष्ठाभ्यांनमः, दीं तर्ज्जनिभ्यां स्वाहाः, दूँ मध्यामाभ्यां वषट्। दैं अनामिकाभ्यां हुँ। दौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, दः करतलपृष्ठाभ्यां फट् का उच्चारण करे।

तत्पश्चात् यथाक्रम् से दां हृदयाय नमः, दीं शिरसे स्वाहा, दूँ शिखायै वषट्, दैं कवचाय हुँम्। दौं नेत्रत्रयाय वौषट्, दः करतल पृष्ठाभ्याम् अस्त्राय फट् का उच्चारण एवं अंगस्पर्श करके अंगन्यासादि करे।

अब ध्यान की विधि कहता हूँ। हे पर्वतनन्दिनी ! श्रवण करो ॥ २३-२६ ॥

सिंहस्कंन्धाधिसंरुढां नानालंकारभूषिताम्।
चतुर्भुजां महादेवीं नागयज्ञोपवीतिनीम् ॥२७॥

शंखचक्रधनुर्बाण　　नयन-त्रितयान्विताम्।
रक्तवस्त्रपरिधानां बालार्कसदृशीं तनुम् ॥२८॥

नारदाद्यैर्मुनिगणैः सेवितां भवगेहिनीम् ।
त्रिवलीवलयोपेत—नाभिनालमृणालिनीम् ॥२९॥

रत्नद्वीपमहाद्वीपे सिंहासनसमन्विते ।
प्रफुल्लकमलारूढां ध्यायेत्तां भवसुन्दरीम् ॥३०॥

महादेवी सिंहस्कन्धसमारूढ़ा, नानालंकार भूषिता, नागयज्ञोपवीत धारिणी, चतुर्भुजा, शंख-चक्र-धनुष तथा तीरधारिणी हैं। वे त्रिनयना, रक्तवस्त्र परिधाना, बालार्क के समान (नवोदित सूर्य के समान) शरीर युक्ता, नारदादि मुनिगण सेविता, त्रिवलीवलयोपेता, नाभिनाल मृणालिनी हैं। वे रत्नद्वीप रूपी महाद्वीप में सिंहासन समन्वित प्रफुल्ल खिले कमल पर आरूढा हैं ॥२७-३०॥

एवं ध्यात्वा यजेद्देवीं उपचारैः पृथक् पृथक् ।
भूतशुद्धिं पुरा कृत्वा न्यसेद्देहेषु पार्वती ॥३१॥
स्वांङ्के उत्तानहस्तौ च प्रणिधाय ततः परम् ।
हृदये हंसमंत्रेण जीवं दीपनिभं सुधीः ॥३२॥
स्थापयेत् परमेव्योम्नि पृथिव्यादीनि च क्रमात् ।
शिवा-पक्षादि भेदेन भिद्यते मरुतो गतिः ॥३३॥

इस प्रकार से महामाया का ध्यान करने में तत्पर होकर पृथक्-पृथक् उपचार के द्वारा देवी की अर्चना करे। हे पार्वती! प्रथमतः साधक को भूतशुद्धि करना चाहिये। तदनन्तर अपना अगन्यासादि करे। इसके पश्चात् अपने अंक में (गोद में) अपने हाथों को इस प्रकार से एक दूसरे पर रक्खें कि दोनों हथेली उपर की ओर हो। अब साधक हंस मंत्र द्वारा प्रदीप की ज्वाला (ज्वाला का ऊपरी हिस्सा) रूप जीवात्मा को हृदय में स्थापित करे। अब क्रमशः परम व्योम में पृथ्वी आदि पंचतत्व की स्थापना करे। इसके पश्चात् शिवापक्षादि भेदन के द्वारा वायु का गतिभेद करे।

मरुत्सखेन तेनेह पच्यते भक्तमेव च ।
तस्मान्मन्त्री गुरोर्ज्ञात्वा नयेत् सर्वं परोपरि ॥३४॥

दीपयेद्दिव्यवच्छिन्नं पावकं सर्वतोमुखम् ।
पश्येद्वान्तरं देहं कर्मरूपं ततः परम् ॥३५॥

वामकुक्षिस्थितं पाप-पुरुषं कज्जलप्रभम् ।
तं संशोष्य तदा दह्य जीवमाधारमानयेत् ॥३६॥

मूलाधारात् ततो जीवं सोऽहं मंत्रेण देशिकः ।
नयेत् परशिवे हंस, मंत्रेणाधारमानयेत् ॥३७॥

एषा भूतशुद्धितंत्र प्रक्रिया कथिताम्बया ।
तव स्नेहेन देवेशि चेदानीं प्रकटीकृता ॥३८॥

यहाँ वायु के साथ अग्नि का विचरण कराने से अन्नादि का पाक होता है । अतः साधक श्री गुरु से प्रक्रियोपदेश लेकर सब कुछ को परमात्मा में स्थापित करे । अब सर्वतोमुखी दिव्य अग्नि को अविच्छिन्न रूपेण प्रदीप्त करे । तत्पश्चात् कर्म-रूपी स्वीय-अपनी अवान्तर देह का प्रत्यक्ष करे । अब वामकुक्षि में कज्जल के समान पापपुरुष का शोषण करके उसका दहन इसी अग्नि से करे । अब जीवात्मा को मूलाधार से अपने आधार में लाये । । इसके पश्चात् सोहं मंत्र के द्वारा जीव को सहस्त्रार में परमशिव के साथ योजित करे । इसके अनन्तर पुनः हंसमंत्र के के द्वारा आत्माको स्वाधार में योजित करे । भूतशुद्धि की इस तंत्रोक्त प्रक्रिया को भूतशुद्धि तंत्र में मैंने ही कहा है । तुम्हारी प्रीति के कारण मैं इसे पुनः प्रकट कर रहा हूँ ॥ ३४-३८ ॥

॥ इति महामायातन्त्रे द्वितीयः पटलः ॥

अथ तृतीयः पटलः

(महामायार्चनायां यन्त्र-स्तव-कवचादिः)

श्री देव्युवाच

कथयस्व महादेव देव्या यन्त्रं स्तवं तथा ।
कवचं परमाश्चर्यं यदुक्तं परमेष्ठिना ॥१॥

श्री ईश्वर उवाच—

शृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि यन्त्रं परमदुर्लभम् ।
त्रिकोणं विन्यसेत् पूर्वं बहिः षट्कोणमेव च ॥२॥
त्रिबिम्बसहितं सर्वं अष्टपत्रसमन्वितम् ।
त्रिरेखासहितं कार्यं तत्र भूपुरसंयुतम् ॥३॥

(महामायार्चना यंत्र, स्तव तथा कवच)

देवी कहती हैं—हे महादेव ! परमदेवता द्वारा कहा गया देवी का परमाश्चर्यमय यंत्र, स्तव एंवं कवचादि का वर्णन करिये ॥१॥

शंकर कहते हैं—हे प्रिये । मैं महामाया का परमदुर्लभ यंत्र बतलाता हूँ । श्रवण करो । सर्वप्रथम एक त्रिकोण का अंकन करे । तदनन्तर इस त्रिकोण के वाह्यभाग में एक षट्कोण का अंकन करे । इस षट्कोण के बहिर्भाग में तीन वृत्तों का अंकन करना चाहिये । इस वृत्त के वहिर्भाग में एक अष्टदल पद्म को अंकित करे । इस अष्टदल के बहिर्भाग में त्रिरेखा का अंकन करके बाहर भूपुर अंकित करे ॥२-३॥

समीकृत्य यथोक्तेन विलिख्य विधिनामुना ।
नानास्त्रसंयुतं कार्यं यन्त्रं मन्त्रसमन्वितम् ॥४॥

देवतां पूजयेद्देवीं मूलप्रकृतिरूपिणीम् ।
पद्मस्थां पूजयेद्दुर्गां सिंहपृष्ठे निषेदुषीम् ॥५॥
प्रभाद्याः शक्तयः पूज्या गन्धाद्यैर्नवकोणके ।
प्रभा माया जया सूक्ष्मा विशुद्धा नन्दिनी पुनः ॥६॥
सुप्रभा विजया सर्व-सिद्धिदा नवशक्तयः ।
ह्रीमाद्याः पूजयेत्तास्तु गन्धचन्दनवारिणा ॥७॥
ॐकारं पूर्वमुच्चार्य ह्रींकारं तदनन्तरम् ।
तथा पदं चतुर्थ्यन्तं पूजयेत् क्रमतः परम् ॥८॥

रेखा आदि की दूरी में समता होनी चाहिये । इस प्रकार के विधान से यह यंत्र अंकित करे । मूलप्रकृतिरूपिणी महामाया की नाना शस्त्र तथा यंत्र-मन्त्रादि से अर्चना करनी चाहिये । इनकी पूजा पद्ममध्यस्था अथवा सिंहासन समारूढ़ारूप से करे । त्रिभुज के कोणत्रय तथा उसके बाहर स्थित षट्कोण—इन नव कोणों में यथाक्रमेण प्रभा, माया, जया, सूक्ष्मा, विशुद्धा, नन्दिनी, सुप्रभा, विजया तथा सर्वसिद्धि नामक नवशक्तियों का पूजन करे । इन शक्तियों का मंत्र लिखा जा रहा है—

ॐ ह्रीं प्रभायै नमः, ॐ ह्रीं मायायै नमः, ॐ ह्रीं जयायै नमः ॐ ह्रीं सूक्ष्मायै नमः, ॐ ह्रीं विशुद्धायै नमः, ॐ ह्रीं नन्दिन्यै नमः, ॐ ह्रीं सुप्रभायै नमः, ॐ ह्रीं विजयायै नमः, ॐ ह्रीं सर्वसिद्धायै नमः ।

इन देवियों पूजन गंध चन्दन तथा जल से करें ॥४–८॥

शंखपद्मनिधिं देव्या वामदक्षिणयोगतः ।
पूजयेत् परया भक्त्या रक्तचन्दनपूर्वकैः ॥९॥
अर्घ्यदानं ततः कुर्यात् पूजान्ते नगनन्दिनी ।
गंगां शक्तिं पुनः पूज्याः पत्रकोणेषु मातरः ॥१०॥
वज्राद्यायुध-संयुक्तं भूपुरे लोकनायकाः ॥११॥

अब देवी के वाम भाग में स्थित शंखनिधि का ऊँ ह्रीं शंखनिधये नमः मन्त्र से तथा ऊँ ह्रीं पद्मनिधयेनमः मन्त्र द्वारा देवी के दक्षिण भाग में स्थित पद्मनिधि का पूजन करे। हे पर्वतनन्दिनी ! पूजा के अन्त में सबको अर्घ्य प्रदान करें। तदनन्तर देवी के वाम भाग में "ऊँ ह्रीं गंगायै नमः" मन्त्र से गंगा की दक्षिण भाग में ॐ ह्रीं शक्त्यै नमः" मन्त्र द्वारा शक्ति की पूजा करे। अब अष्टदल पद्मपत्र के अष्टकोणों में अष्टमातृका पूजन करे। मंगला, विजया, भद्रा, जयन्ती, अपराजिता, नन्दिनी, नारसिंही तथा कौमारी ही अष्टमातृकायें हैं। इनका पूजामंत्र निम्नांकित है :—

ॐ ह्रीं मंगलायै नमः, ॐ ह्रीं विजयायै, नमः, ॐ ह्रीं भद्रायै नमः, ॐ ह्रीं जयन्त्यै नमः, ॐ ह्रीं अपराजितायै नमः, ॐ ह्रीं नन्दिन्यै नमः, ॐ ह्रीं नारसिंह्यै नमः, ॐ ह्रीं कौमार्यै नमः"

इसके पश्चात् प्रथमतः भूपुर में वज्रादि आयुधों का तथा पुनः भूपुर में दश दिक्पालों का पूजन करना चाहिये।

वज्रादि आयुधों का पूजा मंत्र—ॐ ह्री वज्राय नमः, ॐ ह्रीं शक्त्यै नमः, ॐ ह्रीं पाशाय नमः ॐ ह्रीं दण्डाय नमः, ॐ ह्रीं अक्षाय नमः, ॐ ह्रीं चक्राय-नमः, ॐ ह्रीं त्रिशूलाय नमः, ॐ ह्रीं खड्गाय नमः"

दिक्पालगण दिशाओं के अधिपति हैं। इन्द्र को पूर्व का, अग्नि को अग्नि-कोण का, यम को दक्षिण का, निऋति को नैऋत्य कोण का, वरुण को पश्चिम का, वायु को वायुकोण का, कुबेर को उत्तर का, ईशान को ईशाणकोण का, ब्रह्मा को उर्ध्व का एवं अनन्त को अधः का अधिपति कहा गया है। इनका पूजामंत्र यथोक्त है—

ॐ ह्रीं इन्द्राय नमः, ऊँ ह्रीं वन्ह्यै नमः, ऊँ ह्रीं यमाय नमः, ऊँ ह्रीं निऋत्यै नमः, ऊँ ह्रीं वरुणाय नमः, ऊँ ह्रीं वायवे नमः, ऊँ ह्रीं कुबेराय नमः, ऊँ ह्रीं ईशानाय नमः, ऊँ ह्रीं ब्रह्मायै नमः, ऊँ ह्रीं अनन्ताय नमः ॥९–११॥

स्त्रोत्रम्

श्रृणु स्त्रोत्रं महेशानि यदुक्तं परमेष्ठिना ।
ॐ दुर्गे मातर्नमो नित्यं दैत्यदर्पनिसूदनी ।
भक्तानां कल्पलतिके नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१२॥

सर्वमंगलमांगल्ये शिवेसर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरी नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१३॥

नमो नगात्मजे शैले बहुरूप समन्विते ।
भक्तेभ्यो वरदे मात नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१४॥

निशुम्भ—शुम्भमथनी महिषासुरमर्दिनी ।
आर्त्तार्त्तिनाशिनी शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१५॥

इन्द्रादि—द्विविषद्वृन्दवन्दितांङ्घ्रिसरोरुहे ।
नानालंकारसंयुक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१६॥

हे महेशानी ! अनन्त द्वारा कथित महामाया स्त्रोत्र का श्रवण करो । माता दुर्गा ! आप दैत्यदर्पविनाशिनी हैं। आपको सदा नमस्कार है। आप ही नारायणी हैं। भक्तों के लिये कल्पलतिका के समान हैं। आपको नमस्कार !

आप सर्व मंगल विधायिनी शिवा हैं। आप सभी अभीष्ट को देने वाली हैं। सर्वाश्रय स्वरूपिणी, त्रिभुवन जननी, हैमवती नारायणी शक्ति को नमस्कार !

आप सर्वमंगल विधायिनी शिवा हैं। आप सभी अभीष्ट को देने वाली हैं। सर्वाश्रय स्वरूपिणी, त्रिभुवन जननी हैमवती नारायणी शक्ति को नमस्कार !

आप ही शुंम्भ निशुंभ विनाशिनी, महिषासुरमर्दिनी तथा आर्त्तजनों की आर्त्तना का नाश करने वाली है। हे शिवानी, नारायणीशक्ति आपको नमस्कार !

इन्द्रादि स्वर्गनिवासी देवगण आपके चरणपद्म की वन्दना करते हैं। आप ही अनेक अलंकारधारिणी नारायणी हैं। आपको नमस्कार ।! १२-१६॥

नारदाद्यैर्मुनिगणैः सिद्धविद्याधरोरगैः ।
पुरष्कृताञ्जलिपुटे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥१७॥

नारदादि मुनि, सिद्ध विद्याधरगण तथा वासु को प्रभृति आपके आगे बद्धान्जलि होकर आपकी वन्दना करते हैं। आपही नारायणी शक्ति हैं। आपको नमस्कार ॥१७॥

देवराजकृत स्तोत्रे व्याधराज—प्रपूजिते।
त्रैलोक्यत्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तुते ॥१८॥

अभक्त भक्तिदे चण्डी मुग्धबोधस्वरूपिणी।
अज्ञान-ज्ञानभवने नारायणि नमोऽस्तुते ॥१९॥

देवराजकृत स्तोत्र द्वारा व्याधराज आपका पूजन करते हैं। आप ही त्रैलोक्यत्राणकारिणी नारायणी हैं। आपको नमस्कार!

आप अभक्त को भक्ति प्रदान करती हैं। मुग्ध व्यक्ति के लिये आप ही बोधरूपिणी हैं। आप ही ज्ञानीजन को भी मायारूपी अज्ञान पाश में आबद्ध कर लेती हैं। आप नारायणी हैं। आपको नमस्कार! ॥१८-१९॥

इदं स्तोत्रं पठेद् यस्तु प्रदक्षिणपुरःसरम्।
तस्य शान्तिप्रदा देवी दुर्गा दुर्गतिनाशिनी ॥२०॥

जो व्यक्ति देवी की प्रदक्षिणा करके इस स्तोत्र का पाठ करते है, दुर्गति-नाशिनी दुर्गा उनको शान्ति प्रदान करती हैं ॥२०॥

[माया तंत्रोक्त दुर्गास्तोत्र समाप्त]

श्री देव्युवाच—

कथिताः परमेशान दुर्गामंत्राः अनेकधा।
कवचं कीदृशं नाथ पूर्वं मे न प्रकाशितम्।
तद् वदस्व महादेव यद्यहं शरणागता ॥२१॥

देवी कहती हैं—हे परमईशान्! आपने दुर्गा के अनेक मंत्र कहे हैं, किन्तु आपने पहले भी कभी मुझसे दुर्गा कवच का रहस्य प्रकाशित नहीं किया। मैं आपकी शरणागत हूँ। कृपया दुर्गाकवच का उपदेश प्रदान करें ॥२१॥

श्री महादेव उवाच–

श्रृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
पुरा देवासुरे युद्धे यदुक्तं शम्भुना त्वयि ॥२२॥
तन्न स्मरसि कार्येण मुग्धाः प्रायो हि योषितः ।
अस्य श्रीदुर्गाकवचस्य नारद ऋषिरनुष्टुप् छन्दः ।
श्री दुर्गा देवता चतुर्वर्गसिद्धार्थे विनियोगः ॥२३॥

श्रीभगवान् महादेव कहते हैं—हे प्रिये ! तुमने जो प्रश्न किया है उसका उत्तर देता हूँ । श्रवण करो । पूर्वकाल में देवासुर युद्धकाल में शम्भु ने जो तुमसे कहा था, उसे तुमने विमोहित नारी के समान विस्मृत कर दिया है । इस कवच के ऋषि नारद है, छन्द अनुष्टुप् है । इसकी देवता दुर्गा हैं तथा चतुर्वर्ग सिद्धि के लिये यह कवच प्रयोज्य है ॥ २२-२३ ॥

ॐ कारो मे शिरः पातु ह्रींकारः पातु भालकम् ॥२४॥
दूँ पातु वदनं दुर्गा ङेयुता पातु चाक्षुषी ।
नासिकां मे नमः पातु कर्णावष्टाक्षरी सदा ॥२५॥
प्रणवो मे गलं पातु केशान् श्रीबीजमन्ततः ।
लज्जा दन्तान् समारक्षेज्जिह्वां दुर्गा सदावतु ॥२६॥

ॐकार शिर की तथा ह्रीकार ललाट की रक्षा करे । दूँ वीज मुखमण्डल की तथा चतुर्थी विभक्ति युक्त दुर्गा (दुर्गायै) हमारे चक्षुओं की रक्षा करे ।

नमः द्वारा नासिका की तथा अष्टाक्षरी मंत्र (ऊँ ह्रीं दूँ दुर्गायै नमः) द्वारा कर्णद्वय की रक्षा हो । प्रणव से गले की तथा श्री वीज (श्रीं) से हमारे केश की रक्षा हो । लज्जावीज (ह्रीं) से हमारे दातों की तथा दुर्गा द्वारा जिह्वा का रक्षण हो ॥ २४-२६ ॥

ऐं नमः पातु वज्रान्ता ओष्ठौ गण्डौ नवाक्षरी ।
एकाक्षरी महाविद्या वक्षो रक्षतु सर्वदा ॥२७॥

'ऐ नमः' से गमनागमन की तथा नवाक्षरी मंत्र द्वारा (ऊँ श्री ह्रीं ऐं

दुर्गायै नमः) हमारे ओठ एवं गलद्वय रक्षित हो। एकाक्षरी महाविद्या (हूँ) वक्ष की रक्षा करे ॥२७॥

कूर्चाद्या विविधा विद्या बाहु मे परिरक्षतु।
ॐ दुर्गे पातु जंङ्घेद्वे दुर्गे रक्षतु जानुनी ॥२८॥

हूँ बीज तथा अन्यान्य बीज हमारी बाहु की रक्षा करे। ऊं दुर्गे हमारे जानुद्वय की रक्षा करे ॥ २८ ॥

द्वावुरु पातु युगलं रक्षिणी स्वाहयान्विता।
जयदुर्गा सदा पातु गुल्फे द्वे चण्डिकावतु ॥२९॥

'रक्षिणीस्वाहा' से उरु युगल की रक्षा हो। जयदुर्गा सदा हमारी रक्षा करें। चण्डिका हमारे गुल्फद्वय की रक्षा करे ॥ २९ ॥

कटिं जया पातु सदा नाभिं मे विजयावतु।
उदरं पातु मे कीर्तिः पृष्ठं प्रीतिः सदावतु ॥३०॥

जया हमारे कटि प्रदेश की तथा विजया नाभि की रक्षा करे। कीर्त्ति द्वारा उदर की तथा प्रीति द्वारा पृष्ठ देश की रक्षा हो ॥ ३० ॥

प्रभा पादांङ्गुलीन् पातु श्रद्धा स्कन्धौ सदावतु।
मेधा करांगुलीन् सर्वान् नखरान् शुचिरेव च ॥३१॥

शंङ्खो गृह्यन्तु मे पायात् चक्रं लिंगं सदावतु।
सर्वाङ्ग मे सदा पातु खड्गो रक्षतु सर्वतः ॥३२॥

पाशौ मे विविशः पातु दिशः पाशांङ्कुषौ मम।
चापो दारान् शरः पुत्रान् बन्धुश्चापि सदावतु ॥३३॥

इन्द्राद्याः पातु मे चित्रं वज्राद्यास्तु कुटुम्बकान्।
दुर्गा मां पातु सर्वत्र जयदुर्गा च द्वारकान् ॥३४॥

प्रभा पादांगुलियों को, श्रद्धा स्कन्धद्वय की, मेधा करांगुली की तथा शुचि नखों की रक्षा करे।

देवी का शंख गुह्य देश की तथा चक्र लिंग की रक्षा करे। खड्ग सब समय सर्व स्थानों की रक्षा करे।

देवी का पाश विदिशाओं की तथा पाशांकुश दिशाओं की रक्षा करे। धनुष स्त्री की तथा शर हमारे पुत्रों की रक्षा करे।

इन्द्रादि देवता चित्त को, वज्रादि अस्त्रसमूह कुटुम्बीगण की रक्षा करे। दुर्गा सर्वत्र हमारी रक्षा करें। जय दुर्गा हमारे द्वार समूह का रक्षण करें ॥३१-३४॥

यद् यदङ्ग महेशानि वर्जितं कवचेषु च।
तत् सर्वं रक्ष मे देवि पतिपुत्रान्विता सती ॥३५॥
इति मे कथितं देवि कवचं वज्रपंञ्जरम्।
धृत्वा तु क्षोभयेच्छत्रून् दिवि दैत्यभुजे यथा ॥३६॥

हे देवि! हमारे समस्त अंग (जो कवचवर्जित है) जिनका वर्णन इस कवच में नहीं है, उनकी रक्षा पतिपुत्रान्विता सती देवी करें।

हे देवि! मैंने वज्रपंजर नामक यह कवच तुमसे कहा। जैसे स्वर्ग में दैत्यों के बल से देवगण क्षोभित हुये थे, उसी प्रकार इस कवच का धारण करने से साधक के शत्रु क्षोभित होगें ॥३५-३६॥

विधृत्य कवचं बाणी दुन्दुभिञ्च सहानुजम्।
धृत्वा सर्वत्र कपिराट् विजयी मानवोत्तमः ॥३७॥
सयंन्त्रं कवचञ्चैव लिखित्वा भूर्ज्जपत्रके।
अभीष्टं लभते मर्त्यो वत्सरान्नात्र संशयः ॥३८॥
काकवन्ध्या च या नारी मृतापत्या च या भवेत्।
वन्ध्यापत्या जीववत्सा वन्ध्या धृत्वा प्रसूयते ॥३९॥
शतमष्टोत्तरावृत्ते पुरश्चर्या विधीयते।
षण्मासतो भवेत सिद्धिर्यथावत् परिचारतः ॥४०॥
अज्ञात्वा कवचञ्चैतं दुर्गामन्त्रन्तु यो जपेत्।
अल्पायुर्निर्धनो मूर्खो भवत्येव न संशयः ॥४१॥

दुन्दुभिनाद के साथ इस कवच को धारण करने से सर्वत्र हनुमान जी के समान विजय प्राप्त होगी। महामाया का यंत्र तथा कवच भोजपत्र पर लिखकर धारण करने से इस मर्त्यलोक में साधक एक वर्ष में अभीष्ट प्राप्त कर लेता है। इसमें संदेह नहीं है।

जो स्त्री काकवन्ध्या, मृतपत्या अथवा वन्ध्यापत्या हो अथवा जो नारी जीववत्सा हो, वह नारी भी इस यंत्र तथा कवच के प्रभाव से पुत्रवती होती है। इस कवच की १०८ आवृत्ति से पुरश्चरण होता है। यथाविहित विधान द्वारा परिचर्या तथा पुरश्चरण करने पर छ मांस में सिद्धि प्राप्त हो जाती है।

जो व्यक्ति इस कवच को न जानकर दुर्गामंत्र जपते हैं, वे अल्पायु, निर्धन तथा मूर्ख होते हैं। यह निसंदिग्ध तथ्य है।

(इति महामायातंत्रे दुर्गाकवचं समाप्तम्)

इति मायातंत्रेः तृतीय पटलः

(मायातन्त्रोक्त दुर्गाकवच समाप्त)

महामायातन्त्र का तृतीय पटल समाप्त

चतुर्थः पटलः

[महामायामन्त्रस्य पुरश्चरणं, पूजा, बलिः मालाविधानञ्च]

शृणु पार्वति मन्त्राणां पुरश्चर्याविधिं प्रिये ।
जपेदष्टाधिकं लक्षं पुरश्चरणसिद्धये ॥१॥

दशांशं होमयेदाज्यैस्तिलमिश्रैः सुसाधकः ।
तर्पणं चाभिषेकञ्च तद्दशांशतमाचरेत् ॥२॥

ब्राह्मणान् भोजयेदन्ते दक्षिणां गुरवे ददेत् ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री प्रयोगांश्च समाचरेत् ॥३॥

मत्स्य मांसंसुपापूपैर्मृगैः शशककशल्लकैः ।
पूजयेत् परया भक्त्या दुर्गां दुर्गतिहारिणीम् ॥४॥

(महामायामन्त्र की पुरश्चरण विधि, पूजा, बलि तथा मालाविधान)

श्री सदाशिव कहते हैं—हे पार्वती । महामाया के मंत्रों की पुरश्चरण विधि सुनो । पुरश्चरण सिद्धि के लिये एक लाख आठ मंत्र जप करे । तदनन्तर दशसहस्त्र संख्यक होम करे । इसमें तिलमिश्रित घृत का प्रयोग करे । १०० बार अभिषेक करे और दस ब्राह्मणों का भोजन कराये । इसके पश्चात गुरु को दक्षिणा दे । यह प्रक्रिया करने से पुरश्चरण सिद्ध होता है तथा मंत्र का प्रयोग करने की शक्ति प्राप्त होती है । परमाशक्ति के साथ अनेक प्रकार की सुरा तथा मांस प्रभृति उपकरण तथा शशक प्रभृति की बलि प्रदान करे । इससे दुर्गा दुर्गति की नाशिनी पूजा होती है ॥ १-४ ॥

स्वयम्भु कुसुमै शुक्लैः सुगन्धिकुसुमान्वितैः ।
जवायावकसिन्दूररक्तचन्दनसंयुतैः ॥५॥
नानामांसैः शुभैर्द्रव्यैः दग्धसिक्थादिसंयुतैः ।
काकैः शुकैः पेचकैश्च मेषैश्छागैर्नरैस्तथा ॥६॥

गजैरुष्ट्रैः खरैः गृध्रैः पूजयेद्विधिनामुना।
तदा भवेन्महासिद्धि र्देवानामपि दुर्लभा ॥७॥

स्वयम्भु पुष्प, शुक्र, सुगन्धि कुसुम के, सिन्दूर, अलक्तक एवं रक्त चन्दन युक्त जवा पुष्प के द्वारा, नानाविधि मांस, मांगलिक द्रव्य, दग्धमांस प्रभृति उपकरण से तथा काक, शुक, पेचक, गृद्धिनी प्रभृति पक्षी और मेष, छाग, नर, गज, ऊँट, गर्दभ प्रभृति जीव की बलि से विधानानुसार महामाया की पूजा करे। इससे देवदुर्लभ महासिद्धि प्राप्त होती है ॥५-७॥

(मालाविधानम्)

मालाविधानं परमं शृणुष्व कमलानने।
अकारादिक्षकारान्ताः पञ्चाशदविन्दुसंयुताः ॥८॥
क्षमेरुका महाप्रान्ता वर्णमाला सुसिद्धिदा।
ग्रथिता शक्तिसूत्रेण आरोहप्रतिरोहतः ॥९॥
जपेदेकाग्रमनसा तथा वर्णाक्षरान् क्रमात्।
प्रच्छादितो महादेवो यावन्मुखमतन्त्रतः ॥१०॥
क्षकारन्तु मुखं देवी मेरुं तद्विद्धि पार्वती।
पद्मबीजादिभिर्माला बहिर्यागे शृणुस्व ताम् ॥११॥

हे कमलान ने। मैं श्रेष्ठ मालाविधान कहता हूँ, श्रवण करो। अकार से क्षकार पर्यन्त पचास वर्णों को विन्दु (ं) से संयुक्त करके क्षकार की मेरुरूप से गणना करे। यह ५० वर्णमाला आद्याशक्ति रुपिणी सूत्र द्वारा आरोह (अनुलोम) तथा प्रतिरोह (विलोम) क्रम से ग्रथित है। इस वर्णरूपिणी माला से उत्तमा सिद्धि की प्राप्ति होती हैं। एकाग्रचित्त से वर्णाक्षर समूह के द्वारा मूलमन्त्र को पुटित करके जप करे। क्षकार को वर्णमाला का मुख अथवा मेरु कहते हैं। जपकाल में मेरू का लंघन नहीं करे। अब पद्मबीजादि पूजा द्रव्य के द्वारा बनी बाह्य माला के विषय में सुनो ॥ ८-११ ॥

पद्माक्षशंखरुद्राक्षपुत्रजीवकमौक्तिकैः ।
स्फाटिकै र्मणिरत्नैश्च सौवर्णै विद्रुमैस्तथा ॥१२॥

राजतैः कुशमूलैश्च गृहस्थस्याक्षमालिका ।
अंगुलीगणनादेकं पर्वण्यष्टगुणं भवेत् ॥१३॥

पुत्रजीवैर्दशगुणं शतं शंङ्खै सहस्त्रकम् ।
प्रवालै मणिरत्नैश्च दशसहस्त्रकं मतम् ॥१४॥

तदेव स्फाटिकं प्रोक्तं मौक्तिकैर्लक्षमुच्यते ।
पद्माक्षैर्दशलक्षं स्यात् सौवर्णैः कोटिरुच्यते ॥१५॥

कुशग्रन्थ्या कोटिशतं रुद्राक्षैः स्यादनन्तकम् ।
प्रवालैर्विहिता माला प्रयच्छेत् पुष्कलं धनम् ॥१६॥

पद्मबीज, शंख, रुद्राक्ष, पुत्रजीविका बीज, मुक्ता, स्फटिक, सुवर्ण तथा विद्रुम प्रभृति मणिरत्न, रौप्य अथवा कुशामूल द्वारा माला बनाना चाहिए। गृहस्थों के लिए पद्मबीज तथा रुद्राक्ष माला विहित हैं। जपसंख्या की अंगुली-पर्व पर गणना करने से अष्टगुणित फल की प्राप्ति होती हैं। पुत्रजीविका की माला पर जाप करने से दशगुण, शंखमाला पर शतगुण, प्रवाल माला पर जप करने से सहस्त्र गुण फल प्राप्ति होती है। मणिरत्न, स्फटिक पर जाप करने से दश सहस्त्रगुण, मुक्तामाला पर एकलक्षगुण, पद्मबीजमाला पर दशलक्षगुण, सुवर्ण निर्मित माला पर जप करने से कोटि गुण, कुश ग्रंथि निर्मित माला पर जाप करने से शतकोटिगुण फल की प्राप्ति होती हैं। रुद्राक्ष माला पर जाप करने से अनन्तगुण फललाभ होता है। प्रवाल निर्मित माला पर जाप करने से प्रचुर धन प्राप्त होना निश्चित हैं ॥ १२-१६ ॥

वैष्णवे तुलसीकाष्ठै गंजदन्तै गणेश्वरे ।
त्रिपुराया जपे शस्ता रुद्राक्षैः रक्तचन्दनैः ।।१७॥

वैष्णवगण तुलसी काष्ठमाला पर तथा गणेश्वर के उपासक गजदन्त निर्मित माला पर जप करे। त्रिपुरादेवी का मन्त्रजप रुद्राक्ष तथा रक्तचन्दन की माला पर करना प्रशस्त कहा गया हैं ॥ १७ ॥

भुवनेश्याः प्रवालैश्च तदभेदेषु च पार्वती।
शिवे रुद्राक्षभद्राक्षैः बिल्वकाष्ठेषु निर्मितैः ॥१८॥
राजपट्टे मंजुघोषैः कथिता माला निर्णयः।
मालाविधिरिति प्रोक्तः शृणु सूत्रविधिं प्रिये ॥१९॥
पृथ्वीदेवेन्द्रपुण्यस्त्रीकर्तितं ग्रंथिवर्जितम्।
त्रिगुणं त्रिगुणी कृत्वा पट्टसूत्रमथापि वा ॥२०॥
मुखे मुखं तु संयोज्य पुच्छे पुच्छं नियोजयेत।
ग्रन्थयेन्निर्जने मौनी ततः शोधनमाचरेत ॥२१॥
अश्वत्थपत्रनवकैः पद्माकारन्तु कारयेत्।
तन्मध्ये स्थापयेन्मालां मातृकां मूलमुच्चरन् ॥२२॥

भुवनेश्वरी के मंत्र जापार्थ प्रवाल निर्मित माला व्यवहार्य है। शिवमंत्र जपार्थ रुद्राक्ष, भद्राक्ष अथवा बिल्वकाष्ठ निर्मित माला प्रशस्त है। मंजुघोष के मंत्र जापार्थ राजपट्ट निर्मित माला का व्यवहार करना चाहिए। हे प्रिये। मैंने माला विधि का वर्णन किया। अब माला ग्रथन करने की विधि कहता हूँ, श्रवण करो।

ब्राह्मणकुलोत्पन्न स्त्री द्वारा काता हुआ, ग्रंथिशून्य तीन सूत्र द्वारा माला को ग्रथित करे। अथवा केवल मात्र पट्टमूल के द्वारा माला ग्रथित करे।

मुख के साथ मुख को एवं पुच्छ के साथ पुच्छ को सलग्न करके माला की गुटकाओं को ग्रथित करे। निर्जन स्थान में मौन रहकर माला ग्रथित करे। माला का ग्रंथन कार्य सम्पन्न हो जाने पर माला का शोधन करना चाहिए।

नौ अश्वत्थ (पीपल) पत्र द्वारा एक पद्माकृति प्रस्तुत करे। मातृका वर्ण पुटित मूल मंत्रोंच्चारण करके इस पद्माकृति पर माला स्थापित करे ॥१८-२२॥

क्षालयेत् पञ्चगव्येन सद्योजातेन सज्जनैः।
चन्दनागुरुगन्धाद्यैं वामदेवेन वर्षयेत् ॥२३॥

तदनन्तर सद्यः एकत्रित पञ्चगव्य द्वारा साधक इस माला को धो ले। तत्पश्चात् चन्दन, अगुरु प्रभृति गन्धद्रव्यादि से माला का घर्षण करे ॥२३॥

धूपयेत्तामघोरेन लेपयेत्तत् पुरुषेण वै।
मंत्रयेत् पञ्चमेनैव प्रत्येकन्तु सकृत् सकृत् ॥२४॥

इसके अनन्तर अघोर मंत्र से इस माला को धूपित करे। यह चिन्ता करे कि आद्या शक्ति इस माला से युक्त हैं। तत्पश्चात् पंचमकार के प्रत्येक द्रव्य के द्वारा इस माला को पृथक्-पृथक् रूप से (मूलमन्त्र द्वारा) मंत्रपूत करे ॥ २४ ॥

मेरुञ्च मन्त्रयेत्तेन मूलेनापि पृथक् पृथक्।
संस्कृत्यैवं ततो मालां तत् प्राणन् तन्त्र कल्पयेत् ॥२५॥

माला में जो गुटिका सुमेरू है, उसे भी पंचमकार के प्रत्येक द्रव्य के द्वारा पृथक्-पृथक् रूप से मूल मंत्र द्वारा अभिमंत्रित करे। इस प्रकार के संस्कार से माला में प्राण प्रतिष्ठा हो जाती है ॥ २५ ॥

मूलमंत्रेण तां मालां पूजयेत् साधकोत्तमः।
देवप्राणानांस्तु तत्रैव प्रतिष्ठाप्ययजेच्चताम् ॥२६॥

ॐ माले माले महामाले सर्वतत्वस्वरुपिणी।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥२७॥

मूलमंत्र के द्वारा माला में प्राणप्रतिष्ठा करके माला की प्रार्थना करे। हे माले। हे महामाले। आप सर्वतत्व स्वरूपिणी हैं। धर्म-अर्थ-काम-एवं मोक्ष रूप चतुर्वर्ग आप में ही न्यस्त है। अतएव आप हमें सिद्धि प्रदान करे ॥ २७-२६ ॥

माया बीजादिकं कृत्वा रक्तपुष्पैः समर्च्चयेत्।
गोमुखादौ ततो मालां गोपयेन्मातृजारवत्।
अक्षमालां स्वमन्त्रञ्च गुरुं नैव प्रकाशयेत् ॥२८॥

तदनन्तर ह्रीं-बीज का योग करके रक्त पुष्प द्वारा माला की अर्चना करे। माला पूजन मंत्र—ॐ ह्रं मालायै नमः, ॐ स्त्रीं श्रीं मालायै नमः, ॐ मालायै नमः, ॐ क्कीं मालायै नमः।

इनमें से वही मंत्र ग्रहण करे जिस बीज का योजन दुर्गा मंत्र में किया हो। अब गोमुख तथा माला को सर्वदा अत्यन्त गुप्त रक्खे। अक्षमाला तथा मंत्र प्राप्त करके, गुरु से भी दुहराना उचित नहीं है ॥ २८ ॥

इति महामायातन्त्रे चतुर्थः पटलः

महामायातन्त्र का चतुर्थ पटल समाप्त

पंचमः पटलः

(दुर्गामंत्रजपस्य कालविशेषः फलञ्च)

श्री देव्युवाच—

कथयेशान सर्वज्ञ दुर्गानामफलं प्रभो।
श्रुतं किंचिन्मया पूर्वं यदुक्तं सुरसंसदि ॥१॥

(दुर्गा मंत्र जप का विशेष काल तथा फल)

देवी कहती हैं—हे ईशान ! आप सर्वज्ञ हैं। हे प्रभो ! आप दुर्गानाम के फल का वर्णन करें ! पहले देवसभा में आपने यह फल कहा था। उस समय मैंने उसका किंचित ही श्रवण किया था। ॥१॥

श्री ईश्वर उवाच—

शृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि गुह्याद् गुह्यतरं शुभम्।
यदुक्तं ब्रह्मणा पूर्वं सदेवासुरसंगमे ॥२॥
धन्यं यशस्य मायुष्यं प्रजापुष्टिविवर्धनम्।
सहस्त्रनामभिस्तुल्यं हि दुर्गानाम वरानने ॥३॥
महापदि महादुर्गे आयुषो नाशमागते।
जातिभ्रंशे कुलोच्छेदे महानिगडबन्धने ॥४॥
व्याधिसंकटसम्पाते दुश्चिकित्सामये तथा।
शत्रुभिः समनुप्राप्ते बन्धुभिस्त्यक्तसौहृदे ॥५॥
जपेद्दुर्गायुतं नाम ततस्तस्मात् प्रमुच्यते।
दुर्गेति मंगलं नाम यस्य चेतसि वर्तते ॥६॥
स मुक्तो देवि संसारात् स नमस्यः सुरैरपि।
दुर्गेति द्व्यक्षरं मन्त्रं जपतो नास्ति पातकम् ॥७॥

श्री शंकर कहते हैं—हे प्रिये ! अतिशय गोपनीय होने पर भी, अधिकतर गोपनीय दुर्गानाम का फल कहता हूँ, जिसे पुराकाल में ब्रह्मा ने देवासुर संग्राम में कहा था। उसे श्रवण करो। यह धन, यश, आयु, प्रजा तथा पुष्टिवर्धक है। हे वरानने ! दुर्गानाम तो सहस्रनाम के तुल्य है। महा आपत्ति, महा दुर्गति, आयु-नाश, जातिभ्रंश, कुलोच्छेद, महानिगड़ बन्धन, दुश्चिकित्स्य रोग, प्रचण्ड व्याधि, शत्रुपीड़ा, बन्धुजन द्वारा सौहार्द्र परित्याग प्रभृति में दशसहस्र दुर्गानाम का जाप करना चाहिये। इससे विपत्ति से त्राण मिलता है। जिसके चित्त में "दुर्गा" रूपी शुभनाम विद्यमान है, वह संसार सागर से मुक्त होता है और जीवन काल में वह व्यक्ति देवगण द्वारा भी नमस्य रहता है। "दुर्गा" इस दो अक्षर के मंत्र का जाप करने पर कोई पाप नहीं रह जाता ॥२-७॥

कर्मारम्भे स्मरेद् यस्तु तस्य सिद्धिरदूरतः।
दुर्गेति नाम जप्तव्यं लक्षमात्रं सुरेश्वरी ॥८॥
तत्तद् दशांशतो हूत्वा तर्पयित्वा दशांशतः।
अभिषिञ्चेत विप्रेन्द्रान् भोजयित्वा दशांशतः ॥९॥
असाध्यं साधयेद्देवी साधको नात्र संशयः।
होमाद्यशक्तो देवेशि द्विगुणं जपमाचरेत् ॥१०॥
अथवा ब्राह्मणानाञ्च साधकानाञ्च भोजनात्।
व्यङ्गं साङ्गं भवेत् सर्वं नात्र कार्यविचारणा ॥११॥
एतत्कल्पसमा देवी नाश्वमेधादयः प्रिये।
दुर्गानामजपात्तुल्यं नान्यदस्ति कलौ भुवि ॥१२॥

जो व्यक्ति कर्म के आरम्भ में दुर्गा नाम स्मरण करता है, उसकी कार्य-सिद्धि होती है। हे सुरेश्वरी ! एकलक्ष दुर्गानाम जप करे। उसका दशांश होम, होम का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश अभिषेक तथा अभिषेक की दशांश संख्या में ब्राह्मणों को भोजन कराये। हे देवी ! इससे साधक असाध्य साधन में समर्थ हो जाता है। यह निःसंदिग्ध है। होमादि कार्य में अशक्त होने पर होम की

तिगुनी संख्या में जप कराये अथवा ब्राह्मणादि साधकों को भोजन कराये। इस प्रकार से कार्य करने पर नाम जप का समस्त अंग सम्पन्न होगा। हे प्रिये! अश्वमेघ यज्ञ भी दुर्गाकल्प के समतुल्य नहीं है। कलिकाल में पृथ्वी पर दुर्गा नाम जाप की अपेक्षा श्रेष्ठ कार्य कुछ भी नहीं है ॥८-१२॥

शरत्काले तु दुर्गायाः पूरतो जपमाचरेत्।
किमन्यैः कर्मविस्तरैः कथितं ते अद्रिसम्भवे ॥१३॥

सर्वं काममवाप्नोति यद् यदिष्टतमं भुवि।
रवीन्द्रोर्ग्रहणे देवी पुरश्चरणमाचरेत् ॥१४॥

सूर्येन्दुपर्वसदृशः कलौ नास्ति महीतले।
यदि वा लभ्यते देवी बहुभिः पुण्यसञ्चयैः ॥१५॥

अगणय्य च चन्द्रादि ग्रहणे जपमाचरेत्।
गणनं स्नानदानादौ न जपे परमेश्वरी ॥१६॥

रवीन्द्रोर्ग्रहणे पृथ्व्यां जपतुल्यो न च क्रिया।
तस्मात् सर्वं परित्यज्य जपमात्रं समाचरेत् ॥१७॥

शरत् काल में दुर्गा के सम्मुख जप करे। हे पर्वतनन्दिनी! अन्य कर्म बाहुल्य का वर्णन करके क्या होगा? यदि अनेक पुण्यबल से दुर्गानाम प्राप्त हो जाता है, उस स्थिति में उसका चन्द्रसूर्यग्रहण काल में जप करे। ग्रहण काल में जप संख्या, स्नान, दानादि की गणना जपांग रूप में नहीं की जाती। पृथ्वी में ग्रहण काल की अपेक्षा उत्कृष्टतर समय कुछ भी नहीं है। अतः सब कुछ का परित्याग करके ग्रहण काल में केवल जप करे ॥ ३-१७॥

तेनैव सर्वसिद्धि स्यात् नात्र कार्या विचारणा।
उपरागो यदाकाशे तदा देवी प्रकाशते ॥१८॥

सुषुम्नान्ते तथैवासौ दृश्यते नगनन्दिनी।
मनस्तत्रैव संयोज्य ध्यात्वा तं परमाद्भुतम् ॥१९॥

जपेदेकाग्रमनसा नाकाशमवलोकयेत् ।
विदधीत जपन्तावत् यावन्मुक्तिर्भवेत्तयोः ॥२०॥

ततः स्नात्वा तु होमादि ग्रहणान्ते समाचरेत् ।
साधकान् भोजयेद्विप्रान् मिष्टान्नैर्बहुविस्तरैः ॥२१॥

युवतीः कुलकन्याश्च शिवाः सन्तोषयेच्छिवे ।
तदस्तु दक्षिणां दद्याद्विभवस्यानुरूपतः ॥२२॥

केवल मात्र ग्रहण में ही जप के द्वारा समस्त सिद्धि प्राप्त होती है। अतः अन्य कुछ का भी विचार अनावश्यक है। हे देवी ! हे नगनन्दिनी ! जैसे आकाश में ग्रहण परिदृष्ट होता है, उसोप्रकार सुषुम्ना में भी दृष्ट होता है। सुषुम्नामध्य में मनःसंयोग करके दुर्गा का ध्यान करते हुये एकाग्रचित्त से दुर्गा का नाम जप करे। जपकाल में किसी भी बाह्य विषय की चिन्तना नहीं करे। सुषुम्ना मध्यवर्ती ग्रहण मुक्ति पर्यन्त जप करे। तदनन्तर ग्रहणान्त में स्नान करके होमादि करे। तदनन्तर साधक तथा ब्राह्मणों को प्रचुर मिष्टान्न भोजन कराये। इसके पश्चात् साधक अपनी शक्ति तथा सामर्थ्य के अनुसार दक्षिणा प्रदान करते हुये मंगल-दायिनी युवती कुल कन्याओं को भी प्रचुर परिमाण में मिष्टान्न खिलाये ॥१८-२२॥

गुरुभ्यस्तदभावे तु साधकेभ्यः प्रदापयेत् ।
एवं सिद्धमनुर्मन्त्री साधयेत् सकलेप्सितान् ॥२३॥
एतत्ते कथितं देवी रहस्यं परमाद्भुतम् ।
नैतत् त्वया दाम्भिकाय नास्तिकाय शठाय च ॥२४॥
शिवाभक्ताय दुष्टाय द्वेष्ट्रे चैव विशेषतः ।
अशुश्रुषवेऽभक्ताय दुर्विनीताय न दीयताम् ॥२५॥
इति ते कथितं गुह्यं किमन्यत् श्रोतुमिच्छसि ॥२६॥

इति महामायातंन्त्रे पंचमः पटलः ॥

अपने गुरु को दक्षिणा प्रदान करे। गुरु के अभाव में अन्य साधकों को

दक्षिण दान करे। इस नियम से कार्य करने से साधक मंत्रसिद्ध होकर आप्त-काम होता है।

हे देवी! तुमने यह परम अद्भुत नामजप रहस्य सुना। इसे दंभी, नास्तिक, शठ, अभक्ति परायण, दुष्ट, द्वेष परायण, अश्रद्धाशील, तथा दुर्विनीतों को कदापि नहीं देना चाहिये। मैंने तुमसे यह अतिशय गोपनीय दुर्गानाम फल कहा है। अब इसके अतिरिक्त और क्या सुनना है, उसे कहो ॥२३-२६॥

महामायातंन्त्र पंचम पटल समाप्त

षष्ठः पटलः

(सुषुम्नान्तर्गत्–सूर्येन्दोग्रहण वर्णनं, तत्र जपफलञ्च)

श्री देव्युवाच—

देवदेव महादेव कथय स्वानुकम्पया ।
यदि नो कथ्यते देव विमुञ्चामि तदा तनूम् ॥१॥
सर्वतत्त्वमयस्त्वं हि सर्वयोगमयः सदा ।
सुषुम्नान्तर्गतं देव यद्दृष्टं परमेश्वर ॥२॥
एतद् रहस्यं परमं सर्वयोगोत्तमोत्तमम् ॥३॥

श्री ईश्वर उवाच—

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि सुषुम्नामध्यसंस्थितम् ।
सूर्यपर्व महेशानि चन्द्रपर्व तथैव च ॥४॥

(सुषुम्नान्तर्गत चन्द्र एवं सूर्य ग्रहणवर्णन-ग्रहणकाल में जपफल)

देवी कहती हैं—हे देवदेव ! परमेश्वर ! सुषुम्नान्तर्गत् जिस रहस्यात्मक तत्व को आपने देखा है, उस सर्व योगोत्तमोत्तम तत्व का कृपापूर्वक उपदेश करिये । हे देव ! यदि आपने दया करके मुझसे इस रहस्य को नहीं कहा, उस स्थिति में मैं अपना शरीर त्याग कर दूँगी ।

श्री शंकर कहते हैं–अभी मैं सुषुम्नामध्यस्थित चन्द्रपर्व तथा सूर्यपर्व का वर्णन करता हूँ । सुषुम्नामध्य में स्थित सूर्य पर्व (ग्रंथि) सन्धि के अन्तर्गत् सर्वश्रेष्ठ पर्व है । सूर्य पर्व में ब्रह्मादि देवता समूह जपयज्ञ करते रहते हैं ॥ १–४ ॥

सुषुम्नावर्त्म मध्यस्थं सूर्यपर्व परात् परम् ।
यत्र ब्रह्मादयो देवा जपयज्ञेषु तत्पराः ॥५॥

किं पुनर्मानवा नैव वराकाः क्षुद्रबुद्धयः ।
पुष्करद्वीपमासाद्य ये चान्ये मानवाः प्रिये ॥६॥

सुषुम्ना मध्य में जो सूर्यपर्व है वहाँ ब्रह्मादि देवता जपयज्ञ में निरत रहते हैं। अतः क्षुद्रबुद्धि दीन मानवों की बात को क्या कहा जाये ? अर्थात् मानवगण को भी सर्वप्रयत्न द्वारा सूर्यपर्व के जपयज्ञ में सतत् उद्यत रहना चाहिये। हे प्रिये ! जो लोग पुष्कर द्वीप का आश्रय लेकर जप करते हैं, उन्हें किंचित् सिद्धि प्राप्त होती है ॥ ५-६ ॥

तेषाञ्च परमेशानि किंचित् सिद्धिः प्रजायते ।
सूर्यपर्व वरारोहे बहुभाग्येन लभ्यते ॥७॥

तथैव चन्द्रपर्वाख्यं जपयज्ञं सुदुर्लभम् ।
नातः परतरः कालः कश्चिदपि वरानने ॥८॥

उन्हें सामान्य सिद्धि प्राप्त होती है, किन्तु जो सूर्य पर्व का आश्रय लेकर जप यज्ञ करते हैं, हे वरारोहे ! ऐसे लोग परम भाग्यवान हैं। जिन्हें सूर्य ग्रंथि प्राप्त है, अथवा चन्द्र ग्रंथि का सन्धान है, वे भाग्यशाली हैं। इनमें जो जप किया जाता है, जब तक जिस काल पर्यन्त किया जाता है, वह श्रेष्ठकाल है ॥७-८॥

सहस्त्रारे महापद्मे चन्द्रस्तिष्ठति सर्वदा ।
मूलाधारे महेशानि स्वयं सूर्यः प्रकाशते ॥९॥

स्वाधिष्ठाने तु देवेशि वन्हि स्तिष्ठति सर्वदा ।
चन्द्रसूर्यग्रहं देवि यदा भवति बाह्यतः ॥१०॥

तदैव सहसा देवि सहस्त्रारे मनो न्यसेत् ।
सूर्यपर्वणि महेशानि मूलाधारे मनो दधे ॥११॥

बाह्यपर्व महेशानि दृष्ट्वा पुनश्च देशिकः ।
मनो निवेश्य चार्वङ्गी चन्द्रे च ब्रह्मपंकजे ॥१२॥

सूर्ये वा चञ्चलापाङ्गी मूलाधारे मनो न्यसेत् ।
अन्तःपर्वणि देवेशि निविश्य चित्तसारथीम् ॥१३॥

जपं परमयत्नेन नतु वाह्यं निरीक्षयेत् ।
सूर्यादिपर्वं देवेशि पुनः पुनरुदीक्षते ॥१४॥

हे देवेशी ! चन्द्र सदा सहस्त्रार महापद्म में अवस्थान करता है और मूलाधार में सूर्य प्रकाशित रहता है । स्वाधिष्ठान में वन्हि की स्थिति है । हे देवी ! जब वाह्य चन्द्र तथा सूर्य ग्रहण होता है, तब सहस्त्रार में मन को निवद्ध करे । हे महेशानी ! तदनन्तर मन को मूलाधारस्थ सूर्य ग्रंथि में संयुक्त करे । सर्व प्रथम वाह्यग्रहण देखे । तत्पश्चात् सहस्त्रार महापद्म में चन्द्रग्रंथि में मनोनिवेश करे । अथवा मूलाधारस्थ सूर्य के साथ मनः संयोग करे । चित्त सारथी को देहाभ्यंन्तरस्थ चन्द्र एवं सूर्य पर्व के साथ संयुक्त करके एकाग्रता के साथ जप करना चाहिये । अब वाह्यग्रहण का दर्शन न करे । हे चञ्चलापाङ्गी ! हे देवेशी ! वाह्य ग्रहण का पुनः-पुनः दर्शन करने से यह जप निष्फल हो जाता है ॥९–१४ ॥

सुषुम्ना च नदी यत्र साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणी ॥१५॥

गंगादिसर्वतीर्थानि प्रयागवदरी तथा ।
हरिद्वारश्च चार्वङ्गी गया काशी सरस्वती ॥१६॥

सिन्धु-भैरव-शोणाश्च ब्रह्मपुत्रश्च सुन्दरी ।
अयोध्या मथुरा माया काशी कांञ्ची अवन्तिका ॥१७॥

द्वारावती च तीर्थेशी धृत्वा प्रकृतिमूर्तितः ।
गयादि सर्व तीर्थानि तत्र तिष्ठन्ति सन्ततम् ॥१८॥

ब्रह्मरूपा सुषुम्ना ही नदी है । हे चार्वङ्गी ! हे सुन्दरी ! गंगा, सिन्धु भैरव, शोण, ब्रह्मपुत्र, सरस्वती प्रभृति पुण्यतोया नदी तथा प्राग, बदरिकाश्रम, हरिद्वार, गया, काशी, अयोध्या, मथुरा, काञ्ची, माया, अवन्तिका, द्वारावती प्रभृति श्रेष्ट तीर्थ समूह सुषुम्ना में सदा विद्यमान हैं ॥ १५–१८ ॥

चन्द्रसूर्यग्रहे देवी मनोह्यन्तर्दधे शिवे ।
यः पश्येच्चञ्चलापांङ्गी सहस्त्रारे निशाकरम् ॥१९॥

मूलाधारे महेशानी यः पश्येत् सूर्यपर्वणि ।
राहुग्रहसमायुक्तमन्तरात्मनि पार्वती ॥२०॥
दृष्ट्वा सूर्यमिदं भद्रे स्थापयेद् हृदये प्रिये ।
यत्र नीत्वा महामाया सुषुम्नाहृदयरुपिणी ॥२१॥
यस्या वामे इड़ा नाड़ी दक्षिणे पिंगलापरा ।
हृदि स्नात्वा तत्र वीरः शिवशक्तिमयो भवेत् ॥२२॥

हे चंचल अंगोवाली ! हे देवी, हे शिवे, हे महेशानी ! चन्द्र तथा सूर्य ग्रहण में जो वीर साधक देहमध्य में मनः संयोग द्वारा सहस्त्रार में चन्द्रदर्शन करते है, अथवा मूलाधार की सूर्य ग्रंथि में सूर्य को अन्तरात्मा में राहुग्रस्त देखते हैं, तदनन्तर उस राहुग्रस्त सूर्य को अपने हृदय में स्थापित करते हैं (अर्थात् महामाया को हृदयरूपी सुषुम्ना में स्थापित करते हैं) और वामभागस्थ इड़ा तथा दक्षिण भागस्थ पिंगला के मध्य अवस्थित हृदयरूपिणी सुषुम्नानाड़ी में अवगाहन करते हैं, वे साधक शिवशक्तिमय हो जाते हैं ॥ १९-२२ ॥

शिवशक्तिमयी साक्षात् सा संध्या वरवर्णिनी ।
संध्यास्नानमये तत्ते कथितं योगिदुर्लभम् ॥२३॥
सुषुम्नावर्त्म मध्यस्थं यद्दृष्टं वरवर्णिनी ।
दृष्ट्वा चन्द्रग्रहं भद्रे सूर्यं वा जपमाचरेत् ॥२४॥
तावत्कालं जपेन्मत्रं यावन्मोक्षं वरानने ।
एतत्तत्वं महेशानी ब्रह्मा जानाति माधवः ॥२५॥
इन्द्राद्या देवताः सर्वाः बहुभाग्येन लभ्यते ।
ज्ञात्वा तत्वमिदं देवी देवा नागादयोऽपरे ॥२६॥
प्रजप्य चेष्टविद्याञ्च शीघ्रं सिद्धिमुपालभेत् ।
पुष्करादिनिवासास्तु ये लोकाः सुरवन्दिते ॥२७॥
ते ते सर्वे महेशानी किंचित् फलमवाप्नुयुः ।
भारते बहुकालेन सिध्यते नगनन्दिनी ॥२८॥

हे वरवर्णिनी ! जो शिवशक्तिमयी हैं, वे ही साक्षात् सन्ध्यारूपिणी हैं । शिव तथा शक्ति संगम में स्नान करना ही योगीजन दुर्लभ संन्ध्या स्नान है । हे वरवर्णिनी ! सुषुम्नावर्त्म में जो दृग्गोचर होता है, वह तुमको कहा । हे भद्रे ! हे वरानने ! चन्द्र अथवा सूर्यग्रहण का दर्शन करके, ग्रहण मोक्ष पर्यन्त जप करे । हे महेशानी ! केवल ब्रह्मा तथा विष्णु ही यह तत्व जानते हैं ।

इन्द्रादि देवगण ने भी भाग्यबल से इसे जाना है । हे देवी ! देवता, नागगण अथवा अन्य कोई भी इस तथ्य से अवगत होकर, मंत्रजाप द्वारा त्वरित सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं । हे सुरवन्दिते ! हे महेशानी ! जो पुष्करादि लोक में निवास करते हैं, उन्हें सामान्य फल ही प्राप्त होता है, विशेष फल नहीं मिल सकता । हे पर्वतनन्दिनी ! जो इस रहस्य को नहीं जानता, उसे भारतवर्ष में भी दीर्घकाल में मंत्रसिद्ध होता है ॥२३-२८॥

नायं दोषयुतः कालः कलिरेव तु मूर्तिमान् ।
ग्रहणे चन्द्रसूर्यस्य देवा नागादयोऽपरे ॥२९॥
ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ये चान्ये सुरसत्तमाः ।
चन्द्रसूर्यपदं गत्वा प्रजपन्तीष्टसिद्धये ।।३०॥

मूर्तिमान कलि यद्यपि प्रकट है, तथापि सूर्य चन्द्र ग्रहण में जितना समय लगता है, वह किसी भी प्रकार से दोषयुक्त काल नहीं होता । इस समय में देव, नाग, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा अन्यान्य श्रेष्ठ देवगण भी अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिये चन्द्र तथा सूर्य ग्रन्थि में जाकर जप करते रहते हैं ॥२९-३०॥

चन्द्रसूर्यग्रहे देवी यत्तेजस्तुपजायते ।
तत् सर्वं चञ्चलापाङ्गी ब्रह्माद्यास्त्रिदिवौकसः ॥३१॥
हरन्ति चञ्चलापाङ्गी मानुषास्त्वधमा कुतः ।
कलिकालस्य लोकेषु भारते वरवर्णिनी ॥३२॥
नाना दोषाः प्रजायन्ते अतो नैव च सिध्यति ।
चन्द्रसूर्यग्रहे देवी लोका भारतवासिनः ॥३३॥

हे देवी ! हे चञ्चल अंगोवाली ! चन्द्र सूर्य ग्रहण काल में जो तेज उत्पन्न होता है, ब्रह्मादि देवता भी उस तेज को धारण करने की इच्छा रखते हैं। अतः इस सम्बन्ध में अधम मानव की क्या तुलना ? हे वरवर्णिनी ! कलिकाल में भारतवासी नाना दोषों से कलुषित हो चले हैं। अतः उन्हें मंत्र सिद्धि नहीं होती। चन्द्र तथा सूर्य ग्रहण काल में यहाँ के लोग भक्ति पूर्वक जाप करके निश्चय ही सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं। यह कभी भी अन्यथा नहीं होता। चन्द्र ग्रहण में स्नान, दान, श्राद्धादि करने से द्विगुणित फल प्राप्त होता है ॥३१-३३॥

तत्काले प्रजपेद् भक्त्या नान्यथा च कदाचन।
स्नानं दानं तथा श्राद्धमिन्दोः कोटिगुणं भवेत् ॥३४॥

सूर्ये दशगुणं देवी नान्यथा मम भाषितम्।
जपेत्तहि फलं यद्वत्, नान्यथा तद्भवेत् क्वचित् ॥३५॥

अतिगोप्यं महत् पुण्यं सारात् सारं परात् परम्।
न कस्मैचित् प्रवक्तव्यं यदि कल्याणमिच्छसि ॥३६॥

इति महामायातंन्त्रे षष्ठः पटलः

हे देवि ! सूर्य ग्रहण में स्नान-दान श्राद्ध करने से दशकोटि गुणित फल प्राप्त होता है। यह मेरा वाक्य है। कदापि निष्फल नहीं होगा। जप के द्वारा जो फल लाभ होता है, अन्य किसी भी उपाय से वैसा फल नहीं मिलता। सुषुम्ना मध्य स्थित, अतिशय गोपनीय, पुण्यप्रद, सर्ववस्तु का सार तथा श्रेष्ठतम तत्व यही है। यदि तुम अपने कल्याण की कामना करो, उस स्थिति में इसका तत्व किसी को भी प्रकाशित नहीं करना ॥३४-३६॥

महामायातंत्र, षष्ठ पटल समाप्त

सप्तमः पटलः

(सुषुम्नावर्त्ममध्यस्थ मन्त्रः, ग्रहणकाले मोक्षे च जपमन्त्रः तदा जपफलञ्च)

श्री ईश्वर उवाच—

अतः परंप्रवक्ष्यामि अतिगुह्यं परात् परम् ।
सुषुम्नावर्त्ममध्यस्थं यन्मत्रं तत् शृणु प्रिये ॥१॥
एतन्मत्रमविज्ञाय यो जपेत् सूर्यपर्वणि ।
तस्य सर्वार्थहानिःस्यादन्ते नरकमाप्नुयात् ॥२॥
शृणु मंत्रं वराराहे प्रशस्तं पर्वदर्शने ।
मोक्षकाले च चार्वङ्गी प्रशस्तं यत् शृणुष्व तत् ॥३॥
प्रणवत्रयमुद्धृत्य मायाबीजं समुद्धरेत् ।
ततः प्रणवमुद्धृत्य त्रयमेतत् सुदुर्लभम् ॥४॥
एतत् सप्ताक्षरं मन्त्रं प्रजपेद्दशधा प्रिये ।
एतन्मत्रं न प्रजप्य चन्द्रसूर्यग्रहणे तु ॥५॥
यः पश्येद् ग्रहणं देवी प्रायश्चित्तं न विद्यते ।
मोक्षकाले च चार्वंङ्गी देवानामपि दुर्लभम् ॥६॥
मायाबीजत्रयं लिख्य प्रणवं तदनन्तरम् ।
पुनर्मायात्रयं देवी सर्वत्रैव प्रशस्यते ॥७॥

श्रीं शंकर कहते हैं—हे प्रिये । अब मैं श्रेष्ठतर सुषुम्नान्तर्गत वाला अतिशय गोपनीय मंत्र, (जो वहाँ अवस्थित है) कहता हूँ, श्रवण करो !

इस मन्त्र को जाने बिना जो सूर्यपर्व में मंत्रजप करता है, उसके सर्वार्थ का नाश हो जाता है और मृत्यु के उपरान्त वह नरकगामी होता है।

हे वरारोहे ! हे चार्वङ्गी ! सूर्य तथा चन्द्रपर्व दर्शन में तथा ग्रहण-मोक्ष काल में जो मन्त्र प्रशस्त है, उसे सुनो।

ॐ ॐ ॐ ह्रीं ॐ ॐ ॐ, यह ससाक्षर यन्त्र दस बार जप कर ग्रहण दर्शन करे। चन्द्र एवं सूर्य ग्रहण काल में इसका जाप करना चाहिये अन्यथा पापभागी होना पड़ता है। ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं, इस ससाक्षर देवदुर्लभ मन्त्र को मोक्षकालीन ग्रहण दर्शनार्थ प्रशस्त माना गया है ॥ १–७ ॥

वैष्णवेषु च सौरेषु शाक्ते शैवे वरानने।
प्रशस्तं चंञ्चलापांङ्गी नान्यथा तु कदाचन ॥८॥
एतन्मन्त्रमविज्ञाय यः पश्येद् ग्रहणं शुभे।
सर्वं तस्य वृथा देवी चान्ते शूकरतां व्रजेत् ॥९॥
दर्शने मोक्षणे चैव मन्त्रद्वयमितीरितम्।
यन्नोक्तं सर्वतन्त्रेषु चेदानीं प्रकटीकृतम् ॥१०॥

हे वरानने ! हे चंचल अंगो वाली ! वैष्णव, सौर, शक्ति तथा शैव प्रभृति सबके लिए यह मन्त्रद्वय प्रशस्त है। यह कभी भी अन्यथा नहीं होता। जो इसे बिना जाने ग्रहण का दर्शन करता है, उसका समस्त जप वृथा हो जाता है और वह व्यक्ति मृत्यु के अनन्तर शूकर होता है। ग्रहण दर्शन तथा मोक्षकालदर्शनार्थ उक्त मन्त्रद्वय विहित हैं। किसी भी तन्त्र में इस विधान को नहीं कहा गया है। केवल मात्र यहाँ ही इसका प्रकाशन हुआ है ॥ ८–१० ॥

न तिथि नं व्रतं होमो ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः।
ग्रासादिमोक्षपर्यन्तं जपेन्मन्त्रमनन्यधीः ॥११॥
यथा बाह्ये महेशानी तथा चैवान्तरात्मनि।
उभयोरेकतां कृत्वा प्रजपेन्मनसा शुचिः ॥१२॥

चन्द्र तथा सूर्यग्रहण की तिथि, व्रत, होम प्रभृति का विचार न करे। ग्रास के प्रारम्भ से मोक्षपर्यन्त एकाग्र होकर मन्त्रजप ही करे। हे महेशानी! इस विधान से वाह्य आकाशस्थ ग्रहण तथा सुषुम्नामध्य अन्तरात्म ग्रहण में जप करे। दोनों ग्रहणों का एकत्व करके पवित्र साधक मानसिक जप में निरत हो॥ ११-१२ ॥

राहुर्यदा महेशानी सूर्यं चन्द्रञ्च धावति।
वैरीभावमनुस्मृत्य विकलांगस्तु पार्वती ॥१३॥
तदोपरागो भवति सर्वं योगमयं विदुः।
ब्रह्माद्या देवताः सर्वे गंगाद्यातीर्थकोटयः ॥१४॥
सूर्यमण्डलमासाद्य प्रजपेविष्टमन्त्रकम्।
तान् दृष्टवा सहसा राहुः पलायति महापदि ॥१५॥

अंगविहीन राहु जव वैर का स्मरण करके चन्द्र-सूर्य ग्रास हेतु धावित होता है, तभी सर्वयोगमय ग्रहण प्रारम्भ हो जाता है। उस समय ब्रह्मादि समस्त देवता तथा गंगादि कोटि-कोटि तीर्थ सूर्यमण्डल में प्रवेश करके अपने-अपने इष्टमन्त्र का जप करते हैं। उन्हें उपस्थित देखकर तथा इस महाविपत्ति को देखकर राहु पलायन कर देता॥ १३-१५ ॥

अन्यथा तत्क्षणात् सर्वं ब्रह्माण्डं नाशमाप्नुयात्।
तक्षणे सर्व तीर्थानि सामान्यमुदकं प्रिये ॥१६॥

अन्यथा राहु समस्त ब्रह्माण्ड का नाश करने में प्रवृत्त हो जाता। उस समय सामान्य जल भी तीर्थरूप हो जाता है॥ १६ ॥

यान्ति स्वपदमुत्सृज्य सर्वतीर्थोदकस्ततः।
सामान्यमुदकं यत्तु गंगातोयसमं भवेत् ॥१७॥

उस समय प्रत्येक तीर्थ सर्वतीर्थमय हो जाते हैं। सामान्य जल भी गंगाजल हो जाता है॥ १७ ॥

तक्षणे चञ्चलापाङ्गि तज्जले स्नानमात्रतः ।
चतुर्भुजसमाः सर्वे लोकाः भारतवासिनः ॥१८॥

तक्षणाद् गिरिजे सत्यं मोक्षं ब्रह्मपदं लभेत् ।
भारते विविधा पूजा भारते विविधो जपः ॥१९॥

तथापि बहुकालेन सिद्ध्यते संङ्गदोषतः ।
मान्धाता प्रमुखाः सर्वे रामो दाशरथिस्तथा ॥२०॥

हे चंचल अंगोवाली ! ग्रहण काल में जल से स्नान करने पर स्नान मात्र से भारत वासी जनगण चतुर्भुज के समान हो जाते हैं। तक्षण वह स्नानकारी मोक्ष लाभ तथा ब्रह्मपद प्राप्त करता है। यहाँ अनेक देवदेवी की पूजा तथा उनका बहुविध जप प्रचलित है। संग दोष के कारण सब दीर्घ काल में सिद्ध होता है। किन्तु मान्धाता आदि प्रमुख राजा तथा दाशरथी राम ने भी ॥ १८-२० ॥

प्रजप्य तारिणी दुर्गामाशु सिद्धिमवाप्नुयात् ।
अस्य द्वीपेषु वर्षेषु नानातीर्थानि सन्ति च ॥२१॥

तारिणी दुर्गा का मंत्र जप करके त्वरित सिद्धि पाया था। इस जम्बूद्वीप में अनेक तीर्थ अवस्थित हैं ॥ २१ ॥

नानाभोगयुता लोकाः देववत् सर्वदा प्रिये ।
ते सर्वे देवताप्राया नानाभोगविलासिनः ॥२२॥

नानासुखमयाः सर्वे दिव्यस्त्रीगणसेविताः ।
तेषां गेहे महेशानी नानातीर्थानि सन्ति वै ॥२३॥

हे प्रिये ! इन स्थानों के लोकवासी देवतुल्य नाना भोगविलास से युक्त हैं। यहाँ के मानवगण भी देवताओं के समान भोग विलासासक्त रहते हैं। वे नाना सुखों के अधीश्वर हैं और दिव्य स्त्रीसमूह के द्वारा सेवित हैं। हे महेशानी ! उनमें से प्रत्येक के गृह में नानाविध तीर्थ विद्यमान हैं ॥ २२-२३ ॥

ग्रहणं चन्द्रदेवस्य सूर्यदेवस्य सुन्दरी ।
बहुभाग्येन चार्वङ्गी लोका भारतवासिनः ॥२४॥

प्राप्तिमात्रेण जप्तव्यं तत्सर्वमक्षयं भवेत् ।
चतुर्दशी पौर्णमासी सोममङ्गलसंयुता ॥
यदा भवति लोकेऽस्मिन् तदा सूर्यग्रहेण किम् ।
एषा तु चंचलापाङ्गी कोटिसूर्यग्रहैः समा ॥२५-२६॥

हे सुन्दरी ! हे सुन्दर अंगोवाली ! भारत वर्ष के लोग भाग्यवशात् सूर्य एवं चन्द्रग्रहण का तत्व जानते हैं । अतः ग्रहण प्रारंभ होते ही जप प्रारंभ करे । इससे अक्षय फल मिलता है । यदि चतुर्दशी तथा पूर्णिमा तिथि सोम एवं मंगलवार को युक्त होती है, तब सूर्य ग्रहण का ही क्या प्रयोजन ! सोम एवं मंगलयुक्त चतुर्दशी तथा पूर्णिमा करोड़ों सूर्य ग्रहण के समान है ॥ २४-२५ ॥

शुक्लाष्टम्यां नवम्यां वा चतुर्दश्यां तथैव च ।
संक्रान्त्यां पर्वदिवसे पूजालोपं न कारयेत् ॥२७॥
नावश्यं पूणयेद् यस्तु तत्वहीनो भवेत प्रिये ।
एवं तिथौ महादेवीं विष्णुम्वाशिवमेव वा ॥२८॥
यदि नो पूजयेद्देवी तत्वहीनो भवेत् प्रिये ।
तत्वहीनस्य देवेशी जपयज्ञादि निष्फलम् ॥२९॥
शांम्भवी कुप्यते तेभ्यो ब्रह्महत्या पदे-पदे ।
यदयत् पूर्वकृतं कर्म जपहोमादिकञ्च यत् ॥३०॥
तत् सर्वं नाशमायाति मम तुल्यो भवेद् यवि ।
चन्द्रसूर्यग्रहे देवी न चन्द्रं गणयेत् प्रिये ॥३१॥
ब्राह्मणः क्षत्रियाः वैश्यास्तथा शूद्राश्च पार्वती ।
सूर्यग्रहणकालाद्धि नान्यः कालः प्रशस्यते ॥३२॥

शुक्राष्टमी, नवमी, चतुर्दशी, संक्रान्ति तथा पर्व के दिनों में महामाया का पूजन अवश्य करे । इन सब दिवसों में पूजा से विरत न हो । हे प्रिये ! इन सब अवसरों पर पूजा से विरत रहना अनुचित है । इससे तत्वहीनता आती है । हे महादेवी ! इन सब तिथियों पर महामाया की पूजा न करने से विष्णु तथा शिव

भी तत्वहीन हो सकते हैं। तत्वहीन व्यक्ति का तथा होमादि निष्फल हो जाता है।

ऐसे व्यक्ति के प्रति महामाया क्रुद्ध हो जाती है और वह व्यक्ति पग-पग पर ब्रह्महत्या जनित पाप का भागी हो जाता है। उक्त दिवसों पर पूजा न करने पर मेरे समान (शिव तुल्य) व्यक्ति भी अपने पूर्वकृत जप होमादि के फल से रहित हो जाता है। हे प्रिये ! चन्द्र तथा सूर्य ग्रहण काल में तिथ्यादि विचार न करे। हे पार्वती ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि सभी के लिए सूर्यग्रहण की अपेक्षा प्रशस्त काल कोई भी नहीं हैं।। २७-३२ ॥

स कालः परमेशानि परं ब्रह्मस्वरूपवान्।
ग्रहणे चन्द्रसूर्यस्य न जपेद् यदि दीक्षितः ॥३३॥
पूर्वपुण्यं परित्यज्य विष्ठायां जायते कृमिः।
तस्माद् यत्नेन कर्त्तव्यं ग्रहणे जपपूजनम् ॥३४॥
न तिथिर्नाम गोत्रं वा न च संकल्पमाचरेत्।
कलिकाले तु देवेशि यवना बलवत्तराः ॥३५॥

ग्रहणकाल परब्रह्मस्वरूप है। यदि मन्त्रदीक्षित व्यक्ति चन्द्रसूर्य ग्रहणकाल में जप नहीं करता, उस स्थिति में उसका पूर्वपुण्य तो विनष्ट हो ही जाता है, साथ ही वह व्यक्ति दूसरे जन्म में विष्ठा के कृमिरूप से जन्म लेता है। अतएव सर्वप्रयत्न द्वारा ग्रहण काल में जप पूजन करते रहना चाहिए। ग्रहणकाल में जप अथवा पूजा की तिथि, नाम, गोत्र, संकल्प आदि वाक्य का उच्चारण नहीं करना चाहिए। हे देवेशी ! कलिकाल में यवन अत्यन्त बलवान हो जाते हैं ॥ ३३-३५ ॥

मत्स्यमांसरताः सर्वे सर्वदा मद्यसेविनः।
अनाचाररतास्ते न सिद्धन्ति यवनाः कलौ ॥३६॥
यवनानां महेशानि त्र्यक्षरीं ब्रह्मरूपिणीम्।
निगदामि वरारोहे सावधानावधारयः ॥३७॥

वे मांस तथा मछली भोजन करते हैं और मद्यपान में आसक्त बने रहते हैं। वे अनाचार रत भी रहते हैं। अतः कलियुग में ऐसी वृत्ति वाले यवन सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकते। हे महेशानी ! हे वरारोहे ! यवनों के लिये त्र्यक्षरी ब्रह्म रूपिणी मंत्र कहता हूँ। अविहितचित्त होकर श्रवण करो ॥ ३६-३७ ॥

कलावतीं समुद्धृत्य रङ्गिणीं तदनन्तरम्।
रतिबीजं ततो देवि ततस्तु रुद्रयोगिनीम् ॥३८॥

एषा तु त्र्यक्षरी विद्या यवनेषु प्रतिष्ठिता।
संयुक्तैषा यदा विद्या तथैवैकाक्षरी भवेत् ॥३९॥

कलावती (क), रंगिनी (र), रति (ई) एवं रुद्रयोगिनी (ँ) के योग से त्र्यक्षरी मंत्र यवनों के लिये है। इन तीनों के संयोग से क्रीं मन्त्र सिद्ध हो जाता है ॥ ३८-३९ ॥

साचारा ब्राह्मणाद्यास्तु सिद्धयन्ति बहुकालतः।
अनाचाराः प्रणश्यन्ति सत्यमेतन्न संशयः ॥
उपाया ब्राह्मणादीनां तेनोक्ताः शतशो मया ॥४०॥
सिद्धयन्ति ते यथोक्तेन नियमेश्च यथाविधि।
इति ते कथितं देवि रहस्यं परमाद्भुतम् ॥४१॥

न कस्मैचित् प्रवक्तव्यं यदि तेऽस्ति दया मयि ॥४२॥

प्रकृत ब्राह्मण भी दीर्घकाल में सिद्धि प्राप्त करते हैं। विरुद्धाचार वाले विनष्ट हो जाते हैं। इसमें किंचित संदेह नहीं है। अतः मैंने ब्राह्मणादि के लिये भी विहित इस पद्धति को अनेक बार कहा है।

यथोक्त नियमानुसार आचारावलम्बन द्वारा मंत्रसिद्धि प्राप्त होती है। हे देवी ! यह परमाश्चर्यमय रहस्य तुमसे कहा है। यदि तुम मेरे प्रति किंचित भी दयावान हो, उस स्थिति में इस विषय में किसी से भी कुछ भी प्रकाशित नहीं करना ॥ ४०-४२ ॥

इति महामायातंत्रे सप्तमः पटलः

महामायातंत्र, सप्तम पटल समाप्त

अष्टमः पटलः

(काम्यविषये मंत्रप्रयोगः)

श्री ईश्वर उवाच

कथितः परमेशान यन्त्र-मन्त्रस्त्वनेकधा ।
इदानीं श्रोतुमिच्छामि साधनं परमेश्वर ॥१॥
पुरश्चर्याविधिं देव कथय स्वानुकम्पया ॥२॥

(काम्यविषयों में मंत्र प्रयोग)

देवी कहती हैं—हे परमेशान ! आपने अनेक यन्त्रों तथा मन्त्रों का उपदेश दिया है । दे देव ! हे परमेश्वर ! अब मुझे मन्त्र साधन तथा पुरश्चर्या विधि श्रवण करने की इच्छा है । आप दया करके इन सबका उपदेश प्रदान करे ॥१-२।

श्री महादेव उवाच

गोपितं सर्वतंत्रेषु विश्वसारे प्रकाशितम् ।
तत्रैव गुह्यं यद् यत्ते कथयामि शृणुष्व तत् ॥३॥
पृथ्वीमृतुमतीं वीक्ष्य सहस्त्रं यदि नित्यशः ।
जपेदेकाग्रमनसा कुलपूजारतः सुधीः ।
आषोड़शदिनं यावत् वाक्पतिर्भवति ध्रुवम् ॥४॥
मधुपानरतो रात्रौ चन्द्रबिम्बं प्रचुम्ब्य च ।
पुनः पुनः साधकाग्रो भवेत कविवरः क्षणात् ॥५॥

श्री महादेव कहते हैं—यह समस्त तन्त्रों में गोपित है । केवल इसका विश्व-सार तंत्र में किंचित् प्रकाशन हुआ है । वहाँ भी जो गुह्य रह गया है उसे सुनो । कुल पूजारत साधक पृथ्वी को ऋतुमती देखकर (अर्थात् अम्बुवाची प्रवृत्ति में)

एकाग्र चित्त होकर प्रतिदिन सहस्र संख्यक मंत्रजप करे। इससे वह वृहस्पति के समान हो जाता है। यह १६ दिन करना चाहिये।

कुलपूजानिरत साधक इस समय रात में मधुपान करके पुनः-पुनः कुलयुवती का मुख चुम्बन करते हुये १६ दिन तक प्रतिदिन एक हजार मंत्रजाप करे इससे वह तक्षण श्रेष्ठ कवित्व शक्ति प्राप्त करता है ॥३-५॥

मर्दयन् गिरियुगं देवि तदालिङ्ग्य प्रयत्नतः।
एवमष्टोत्तरशतं कृत्वा धनपतिर्भवेत् ॥६॥

कुल पूजरित साधक पृथ्वी को ऋतुमती जान कर कुलयुवती का सयत्न आलिंगन करते हुये. उसके कुचद्वय का मर्दन करते हुये यदि १६ दिनों तक प्रतिदिन १०८ संख्यक जप करे उस स्थिति में वह धनपति हो जाता है।

कुण्डगोलोद्भवं पुष्पं समादाय प्रयत्नतः ॥७॥
निवेदयेन्महादेव्यै प्रसादं तिलकञ्चरेत्।
शताभिमंत्रितं कृत्वा मोहयेदखिलं जगत् ॥८॥
क्रोधे कालसमो नित्यं दाने वासववत् प्रिये।
बृहस्पतिसमो वक्ता कामवत् कामिनीषु च ॥९॥

कुल पूजारत साधक पृथ्वी को ऋतुमती देखकर सयत्न पूर्वक ऋतु शोणित ग्रहण करे। उसे आद्यशक्ति महामाया को निवेदित करे। तदनन्तर उसे प्रसाद रूप में लेकर ललाट पर तिलक करे। तिलक के पूर्व उसे १०८ बार आद्याशक्ति के मन्त्र से अभिमंत्रित करे। इससे वह अखिल जगत को मोहित कर लेता है। वह साधक क्रोध में महाकाल, दान में वासव के समान. वक्तृता में वृहस्पति तथा कामिनी समूह के समक्ष कामदेव के समान प्रतीत होता है ॥६-९॥

किमन्यैर्बहुधालापैः स शिवो नात्र संशयः।
कुलपूजाविधियुतो ध्यात्वा च परमेश्वरीम् ॥१०॥
अयुतं तदा जप्तैवं कुमारीं भोजयेत्ततः।
गुरुवे दक्षिणां दत्वा भवेत् सर्वजनप्रियः ॥११॥

इस सम्बन्ध में अधिक कहने का क्या प्रयोजन ! वह साधक स्वयं शिव के समान है, यह निःसंदिग्ध है। कुलपूजन विधि से परमेश्वरी का ध्यान करे, १०००० (दश सहस्त्र) मंत्र जाप के अनन्तर कुमारी भोजन कराये, गुरु को दक्षिणा दे, ऐसा साधक सर्वजनप्रिय हो जाता है ॥१०-११॥

प्रतिपद्दिनमारभ्यं जपेत् प्रतिपदन्तरम् ।
सहस्त्रं प्रत्यहं हूत्वा जप्त्वा च परमं मनूम् ॥
शक्त्यानुज्ञां गृहीत्वा च रिपून् हन्यान्न संशयः ॥१२॥
प्रातः प्रातः पिबेत्तोयमष्टोत्तरशतं जपन् ॥१३॥
अनेन मूको दुष्टात्मा जड़पाषाणवत्तदा ।
अनेन जलपानेन साक्षात् वाक्पतिसन्निभः ॥१४॥

शुक्ल अथवा कृष्णपक्ष की प्रतिपदा तिथि से आरंभ करके तत्परिवर्त्ती शुक्ल अथा कृष्णपक्ष की प्रतिपदापर्यन्त प्रतिदिन महामंत्र जपे तथा प्रतिदिन सहस्त्रसंख्यक होम करे। साधक शक्ति की आज्ञा लेकर शत्रुहनन कर सकता है। यह निःसंदिग्ध है। प्रतिदिन १०८ वार मन्त्र जाप करे। इस मंत्र से पवित्र किये जल को पीये। इससे मूक, पाषाणवत् जड़ अथवा दुष्टात्मा भी बृहस्पति के समान हो जाता है ॥१२-१४॥

जायते नात्र संशयः सत्यं सत्यं न संशयः ।
लक्षं जप्त्वा ततो ध्यात्वा त्रैलोक्यवशकारिणीम् ॥१५॥

ऐसा होता है। यह सत्य है, सत्य है, निःसंशय है। एक लाख जप करके देवी ध्यान करने से त्रैलोक्य वश में हो जाता है ॥ १५ ॥

शत्रुतो न भयं तस्य राजतो दस्युतोऽपि वा ।
न तस्य विद्यते भीतिः कदाचिदपि सुव्रते ॥१६॥
वश्या भवन्ति सर्वेऽपि देवतापि च शंङ्करी ।
ध्यात्वा हृत् पद्ममध्ये तु दुर्गांत्रैलोक्य मोहिनीम् ॥१७॥

जपेदष्टसहस्त्रन्तु वृष्टिमाप्नोत्यसंशयः ।
मालतीमल्लिकाजातीकुसुमैर्मधुमिश्रितैः ॥१८॥
घृतपूर्णे हुनेद्देवि वागीशत्वं प्रजायते ।
मूकस्यापि हि मूढस्य शीलारूपस्य नान्यथा ॥१९॥

हे शंकरी ! समस्त व्यक्ति यहाँ तक कि देवता भी उसके वशीभूत हो जाते हैं । त्रैलोक्यमोहिनी दुर्गा का ध्यान हृदयकमल में करके १००८ बार मन्त्र जप करने से निश्चित रूप से वृष्टि होने लगती है । यह निःसंदिग्ध है । मालती, मल्लिका, चमेली को घृत तथा शहद में मिलाकर होम करके साधक वृहस्पति के समान हो जाता है । मूक तथा बहरे भी वृहस्पति के समान शील-गुण से युक्त हो जाते हैं । यह कभी भी असत्य नहीं होता ॥१६-१९॥

जवापुष्पैराज्ययुक्तैः करवीरैस्तथाविधैः ।
हवनान्मोहयन्मन्त्री लोकत्रयनिवासिनः ॥२०॥

सघृत जवापुष्प तथा कनेर के फूलों द्वारा होम करने से त्रैलोक्य के समस्त लोग मोहित हो जाते हैं ॥२०॥

कर्पूरं कुङ्कुमं देवि मिश्रं मृगमदेन हि ।
हवनान् मदनो देवि मंत्रिणा विजितो भवेत् ॥२१॥

कपूर, कुंकुम तथा कस्तूरी को मिलाकर हवन करने से सौभाग्य, विलास तथा सामर्थ्य की प्राप्ति होती है, जिससे साधक कामदेव को भी पराजित कर देता है ॥२१॥

सौभाग्येन विलासेन सामर्थ्येनापि सुव्रते ।
चम्पकैः पाटलै र्हुत्वा श्रियं प्रोल्लसिताम्बराम् ॥२२॥

पाटलवर्ण के चम्पा के पुष्पों से होम करके साधक महान् लक्ष्मी एवं उल्लसित श्री कि प्राप्ति करता है ॥२२॥

प्राप्नोति मन्त्री महतीं स्तम्भयेज्जगतीमिमाम् ।
श्रीखण्डं गुग्गुलूं चन्द्रमगुरुं होमयेत्ततः ॥२३॥

नागेन्द्रासुरदेवानां पुरस्त्रीवर्गमानयेत् ।
सर्वलोकवशास्तस्य भवन्त्येव न संशयः ॥२४॥

लालचन्दन, गुग्गुल, कपूर तथा अगर से होम करने से नागेन्द्र, असुर तथा देवताओं की स्त्रियां भी वशीभूत होकर साधक के पास आने लगती हैं और स्वर्ग, मृत्युलोक एवं पालाल भी वश में हो जाता है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है ॥२३-२४॥

लक्षहोमाल्लभेत् राज्यं दरिद्र्यभयपीडितः ।
दुर्गोपशमनं देवि पलत्रिमधुहोमतः ॥२५॥

अत्यन्त दरिद्र तथा भयार्त्त व्यक्ति को भी एक लाख आहुति द्वारा राज्य प्राप्ति हो जाती है। घृत, शहद तथा चीनी को पांच-पांच तोला की मात्रा में मिलाकर (अर्थात् समान मात्रा में मिलाकर) होम करना चाहिये, जिससे दुर्गति का नाश हो जाता है ॥२५॥

रुधिराक्तेन छागस्य मांसेन निशि होमतः ।
मधुत्रयसंयुक्तेन गुरुणोक्तविधानतः ॥२६॥
परराष्ट्रं महादुर्गं सन्नस्तं स्ववशं नयेत् ।
गोक्षीरं मधुदध्याज्यं पृथक् हुत्वा वरानने ॥२७॥
आयुर्बलं महारोग्यं समृद्धिर्जायते नृणाम् ।
क्रमेण लाजक्षीरमधुभ्यां मृत्युनाशनम् ॥२८॥

रात्रि में घृत, शहद तथा चीनी में रक्त से लिपटा बकरे का मांस मिलाये। तदनन्तर उसकी आहुति गुरु द्वारा बताये गये विधान से देने पर पराया राष्ट्र एवं पराया महादुर्ग भी साधक के अधीन हो जाता है। हे वरानने ! गाय का दूध, शहद, गाय का दही तथा गोघृत द्वारा (अलग-अलग) हवन करने से यह फल प्राप्त होता है—

गोदुग्ध = आयु

शहद = बल

गाय का दही = आरोग्य
गोघृत = समृद्धि

धान का लावा, गाय का दूध तथा मधु से (अलग-अलग) हवन करने पर मृत्यु भी विजित हो जाती है ॥२६-२८॥

दधिसाक्षिकहोमेन सौभाग्यधनमाप्नुयात् ।
सितया केवलं होमो वैरिस्तम्भनकारकः ॥२९॥

दधि एवं शहद का होम करने से धन, सौभाग्य प्राप्ति होती है। केवल शर्करा से हवन करने पर शत्रुगण स्तम्भित हो जाते हैं ॥२९॥

होमदधिमधुक्षीरलाजैश्च वीरवन्दिते ।
रोगहन्ता कालहन्ता मृत्युहन्ता न संशयः ॥३०॥

हे वीरवन्दिते ! दही, शहद, दूध एवं लावा द्वारा होम करने से अकाल मृत्यु तथा मृत्यु का नाश होता है। यह निःसंदिग्ध है ॥३०॥

कमलैवरुणैः होमैः सम्यक् सम्पत्तिकारकः ।
रक्तोत्पलैर्जगद्वश्यं राजानः स्ववशाः क्षणात् ॥३१॥

रक्तवर्ण कमल द्वारा हवन करने से अतुलित सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। लाल कमल द्वारा होम करने से समस्त जगत् ही नहीं, राजा तक तत्काल वशीभूत हो जाते हैं ॥३॥

नीलोत्पलैर्महादुष्टा वशमायान्ति नान्यथा ।
श्वेतोत्पलैः श्रियं राज्यं लभते हवनात् प्रिये ॥३२॥

नीलकमल होम का फल है महान् दुष्ट का वशीकरण। यह कभी भी निष्फल नहीं होता। सफेद कमल से होम करने पर श्री तथा राज्य प्राप्ति होती है ॥३२॥

अक्षमालां प्रपूज्याथ चन्दनेन प्रपूजिताम् ।
समाश्रित्य जपेद्विद्यां लक्षमात्रं सदाशुचिः ॥३३॥

पद्मबीज या रुद्राक्ष की माला की पूजा चन्दन द्वारा करके पवित्रभाव से एकलक्ष जप करना चाहिए ॥३३॥

योषितो मानयन्त्येव मनस्तस्य सुनिश्चितम् ।
तदा द्वितीये लक्षन्तु जपेत् साधकसत्तमः ॥३४॥
पातालतलनागेन्द्रकन्यकाः क्षोभयन्ति तम् ।
तासां कटाक्षजालैस्तु सम्मोहयन्ति साधकम् ॥३५॥

एक लाख जप द्वारा युवतीगण साधक के प्रति आकर्षित होने लगती हैं और उसमें चित्त चांचल्य पैदा होता है। अब साधक को पुनः एक लाख मन्त्र का जप करना चाहिए। इसके फलस्वरूप पाताल तल में रहने वाली नागकन्यायें भी क्षुब्ध हो जाती है। उनके कटाक्ष से साधक तत्काल मोहित हो जाता है ॥३४-३५॥

तदालक्षत्रयं जपेत् साधकः स्थिरमानसः ।
तृतीयलक्षे संजप्ते भ्रामयन्ति पुराङ्गनाः ॥३६॥
अतिमानेन सौन्दर्यसौभाग्यमदकारिणीः ।
साधकं भ्रामयन्त्येव तन्नाली स्थिरमानसः ॥३७॥
तदालक्षत्रयं साधु सर्वपापनिकृन्तनम् ।
एवं लक्षत्रयं जप्ते साधकः स्थिरमानसः ॥३८॥
सम्मोहयन्ति स्वर्लोकभूर्लोकतलवासिनः ।
पुरुषा योषितो नश्याश्चराचरजनाः प्रिये ॥३९॥

अब साधक को स्थिर चित्त से पुनः तीन लाख जप करना चाहिये। तीन लाख जप समाप्त होते ही सौभाग्यमद से गर्विता, सौन्दर्य का अभिमान करने वाली देवसुन्दरी भी आकर्षित होकर साधक के पास आ जाती हैं। उनके द्वारा चित्त में चंचलता का प्रयास किये जाने पर भी साधक को स्थिर चित्त ही रहना चाहिये।

इस प्रकार तीन लाख जप की समाप्ति पर साधक के समस्त पाप विनष्ट हो जाते हैं। तब स्वर्गलोक, पृथ्वी तथा पातालवासी, सचराचर उसके वशीभूत हो जाते हैं ॥३६-३९॥

गोरोचनादिभिर्द्रव्यैश्चक्रराजं समालिखेत् ।
मन्दिरं सुन्दरं रम्यं तन्मध्ये प्रतिमां वराम् ॥४०॥

गोरोचन आदि द्रव्यों से महामाया का यन्त्र अंकित करे। उसमें सुन्दर मन्दिर का अंकन करके सुन्दर प्रतिमा बनाये ॥४०॥

ज्वलन्तीं नामसहितां महाबीजविदर्भिताम् ।
चिन्तयेत्तु ततो देवीं योजनानां सहस्त्रशः ॥४१॥
अदृष्टपूर्वा देवेशि श्रुतमात्रापि दुर्लभा ।
राज्ञः कन्याथवा भार्या भयलज्जाविवर्जिता ॥४२॥
आयाति साधकं सम्यक् मन्त्रमूढ़ा सती प्रिये ।
चक्रमध्यगता भूयः साधकश्चिन्तयेत् सदा ॥४३॥
उद्यत्सूर्यसहस्त्राभमात्मानमरुणस्तथा ।
साध्यमप्यरुणीभूतं चिन्तयेत् परमेश्वरी ॥४४॥
अनेन क्रमयोगेन स्वयं कन्दर्परुपभाक् ।
सर्वसौभाग्यसंयुक्तः सर्वलोकवशङ्करः ॥४५॥

तदनन्तर महामाया के बीज से पुटित करके वांछित नारी का नाम उसमें लिखे। अब ध्यान करे कि बीजमन्त्र वांछित नारी के नाम के साथ जल रहा है। हे देवेशी। अब ऐसी राजकन्या या राजपत्नी, (जिसे आजतक किसी पर-पुरुष ने देखा तक न हो,) हजारों योजन की दूरी से भी भय-लज्जा का त्याग करके मूढ़ अथवा असती स्त्री के समान साधक के पास आ जाती है। हे परमेश्वरी ! साधक को चाहिए कि वह चक्र के मध्य में अवस्थान करते हुये अपनी आत्मा का चिन्तन सहस्र उदीयान सूर्य के समान रक्तवर्ण तथा तेजपुंज युक्त करे। इस प्रकार की क्रमागत साधना से साधक स्वयं कन्दर्प कामदेव के

समान समस्त सौभाग्य से युक्त एवं सबका वशीकरण करने वाला हो जाता है ॥४१-४५॥

सर्वरक्तोपचारैश्च मुद्रासहितविग्रहः ।
चक्रं सम्पूजयेत् यो हि यस्य नाम विदर्भितम् ॥४६॥
स भवेद्वासवो देवि धनाड्यो वापि भूपतिः ।
इदं गुह्यं महेशानि यदुक्तं तव सन्निधौ ॥४७॥
न कस्मैचित् प्रवक्तव्यं प्राणसंशययोगतः ॥४८॥

हे देवी ! सब प्रकार के रक्तोपचार (रक्तद्वारा) मुद्रा एवं मूर्त्ति के साथ (ऊपर अंकित विधि से) यन्त्र में जिस व्यक्ति का नाम लिखकर यन्त्रपूजन किया जायेगा, वह व्यक्ति इन्द्र के समान धनाढ्य या कवि हो जाता है । हे महाशानी ! मैंने महामाया के मन्त्र प्रयोग के सम्बन्ध में तुमसे जो कुछ कहा, उसे जीवन प्राण का भय होने पर भी किसी से व्यक्त करना उचित नहीं है ॥४६-४९॥

। इति महामायातन्त्रे अष्टमः पटलः ।

महामायातन्त्र का आठवाँ पटल समाप्त ।

नवमः पटलः

(होमाविधानम्)

श्रीदेव्युवाच

हवनं कुत्र कर्त्तव्यं विशेषेण वदस्व मे।
समावेदय मे नाथ यद्यहं तव वल्लभा ॥१॥

देवी कहती हैं—हे नाथ ! यदि मैं आपकी प्रिय हूं, तव आप यह उपदेश करें कि हवन कहाँ करना चाहिए। इसे विशेष विस्तारपूर्वक कहने की कृपा करें ॥१॥

श्रीमहादेव्युवाच

धन्ये प्रियतमे तन्वि शृणुष्वावहिता भव।
होमं कुर्यात् कुण्डमध्ये प्रकारं कथयामि ते ॥२॥

शान्त्यौ पुष्ट्यौ तथारोग्ये कुण्डञ्च चतुरस्त्रकम्।
आकर्षणे त्रिकोणं स्यादुच्चारे वर्त्तुलं तथा ॥३॥

मारणे च तथा योज्यं वर्त्तुलं मन्त्रिभिः सदा।
उदीच्यां पौष्टिके कुण्डं वारुणे शान्तिकादिषु ॥४॥

उच्चाटे चानिले कुण्डं याम्ये च मारणे भवेत्।
विप्राणां चतुरस्त्रं स्याद्राज्ञां वर्त्तुलमिष्यते ॥५॥

वैश्यानामर्द्धचन्द्रं हि शूद्राणां त्र्यस्त्रमीरितम्।
चतुरस्त्रञ्च सर्वेषां केचिदिच्छन्ति तान्त्रिकाः ॥६॥

चतुरस्त्रे महेशानि सर्वकर्माणि साधयेत्।
सर्वाधिकारिकं कुण्डं सर्वदा चतुरस्त्रकम् ॥७॥

महादेव कहते हैं--हे प्रियतमे ! हे देवी ! तुम धन्य हो। तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देता हूँ।

शान्ति-पुष्टि तथा आरोग्यार्थ कुण्ड को चतुष्कोण बनाये। आकर्षण हेतु त्रिकोण कुण्ड, उच्चाटनार्थ वर्त्तुल, मारण हेतु गोलाकर कुण्ड में हवन करे। पुष्टि पूर्व में, शान्ति इत्यादि पश्चिम में, उच्चाटन वायुकोण में एवं मारणार्थ दक्षिण दिशा में कुण्ड बनाये। विप्रगण चतुष्कोण कुण्ड में तथा राजा वर्त्तुल कुण्ड में हवन करे।

वैश्य के लिए अर्धचन्द्राकृति तथा शूद्र के लिये त्रिकोणकुण्ड विहित है। कोई तांत्रिक सब के लिये ही चतुष्कोण कुण्ड का विधान करते हैं।

हे महेशानी ! चतुष्कोण कुण्ड में समस्त कार्य किया जा सकता है। यह सर्वाधिकारक तथा समस्त फल देने वाला है ॥२-७॥

गृहादिकरणे हस्तनियमं कथयामि ते।
रथादि दोलिका चैव पोतं शकटमेव च ॥८॥
मानाङ्गुलेन कर्त्तव्यं नान्येनापि कदाचन।
मुष्ट्यरात्नि प्रमाणानि यत् किंचित् कथितानि च ॥९॥
यजमानस्य कर्त्तव्यं नान्यस्यापि कदापि कदाचन।
मनक्रियायामुक्तायामनुक्ते मानकर्त्तरी ॥१०॥
मानकृद् यजमानःस्याद्विदुषामेव निर्णयः।
चतुर्विंशत्यङ्गुलाढ्यं हस्त तन्त्रविदो विदुः ॥११॥

इस गृहादि कार्य में हाथ का नाप किस प्रकार से होता है, इसे कहते हैं। रथ, डोला, पोत अथवा शंकट को अंगुलि के माप से बनाना चाहिए। इसके अतिरिक्त नाप नहीं लेना चाहिए। मुष्टि एवं अदत्नि प्रभृति जो कुछ माप कहा गया है वह सब यजमान के लिए है। अन्य का नाप नहीं लेना चाहिए। अर्थात् अन्य की उंगली आदि से नहीं नापना चाहिए। जिन सब परिमाप के लिए यहाँ कहा जा रहा है, वह सब यज्ञकर्त्ता का अपना माप होता है।

विद्वानों ने यही सिद्धान्त निश्चित किया है कि केवलमात्र यजमान ही स्वयं माप दे। तत्वविद् लोगों ने यह स्थिर किया है कि एकहस्त प्रमाण (एक हांथ माप)—२४ अंगुल ॥ ८–११ ॥

कर्त्तुं दक्षिणहस्तस्य मध्यमांङ्गुलिपर्वणः।
मध्यस्य दैर्घ्यमानेन मानाङ्गुलमुदाहृतम् ॥१२॥

यवानां तण्डुलैरेक मंङ्गुचाष्ठभिर्भवेत्।
अदीर्घयोंजितैर्हस्त चतुर्विंशतिकाङ्गुलैः ॥१३॥

अष्टभिस्तैर्भवेत् योज्यं मध्यमं सप्तभिर्यवैः।
कनिष्ठं षट्भिरुद्दिष्टमंगुलं प्राणवल्लभे ॥१४॥
सहस्त्रे खलु होतव्य कुर्यात् कुण्डं करात्मकम्।
द्विहस्तमयुते तच्च लक्षहोमे चतुःष्करम् ॥१५॥

होमकर्त्ता के दक्षिण हाथ की मध्यांगुलि के मध्य पर्व के दैर्घ्य परिमाण को ही एक अंगुल परिमाप कहा जाता है। आठ जौ के तण्डुल के द्वारा एक अंगुलिमान को निरूपित किया गया है। पास-पास सटाकर २४ अंगुल नापने से एक हाथ परिमाप मानते हैं। सहस्त्राहुति के लिए एक हाथ का कुण्ड बनाना चाहिए। दश सहस्त्र आहुति के लिए दो हाथ प्रमाण का तथा एक लाख आहुति के लिए चार हाथ का कुण्ड विहित है ॥ १२–१५ ॥

षट्करे वेदलक्षन्तु अष्टहस्ते दशलक्षकम्।
दशहस्ते तु कोटिर्वै हस्तसंख्या व्यवस्थिता ॥१६॥

चार लाख होम के लिए ६ हाथ तथा दश लक्ष होम के लिए आठ हाथ, एक करोड़ हो (आहुति) के लिए दश हस्थ प्रमाण (दस हाथ का) होमकुण्ड निर्मित किया जाना चाहिए ॥ १६ ॥

दशहस्तां परं नास्ति होमकुण्डं महीतले।
अत्राज्य होमे बोद्धव्यं करवीराविषु प्रिये ॥१७॥

मुष्टिमात्रमितं कुण्डं शतार्द्धे च प्रचक्ष्यते ।
शतहोमे अरत्निमात्रं हस्तमात्रं सहस्त्रके ॥१८॥

पृथ्वी पर दश हाथ से अधिक प्रमाण के होमकुण्ड का कोई विधान नहीं है। यहां जो भी कुण्ड का माप निश्चित किया गया है, वह केवलमात्र घृत अथवा करवीर आदि पुष्प के द्वारा होम करने के लिए निश्चित किया गया है। ५० आहुति हेतु मुष्टि परिमाण का, शतहोमार्थ अरत्नि प्रमाण का तथा सहस्त्र होमार्थ एक हाथ का कुण्ड विहित होता है ॥ १७–१८ ॥

द्विहस्तमयुते लक्षे चतुर्हस्तमुदाहृतम् ।
दशलक्षे च षड्हस्तं कोट्यामष्टकं स्मृतम् ॥१९॥
एकहस्तमितं कुण्डं लक्षहोमे विधीयते ।
लक्षाणां दशकं यावत् तावद्हस्तेन वर्धयेत् ॥२०॥

अयुत होमाहुति के लिए दो हांथ तथा एक लक्ष के लिये चार हाथ, दश लक्ष के लिए आठ हाथ का होमकुण्ड विहित है। हे देवी ! लक्ष होम के लिए एक हस्त परिमाण का कुण्ड निर्दिष्ट किया गया है। तदनन्तर प्रति दक्षलक्ष होमार्थ कुण्ड का परिमाण एक हाथ बढाया जाता रहता है ॥ १९–२० ॥

नाल मेखलयोर्मध्ये परिधेः स्थापनाय च ।
रध्रं कुर्यात् तथा विद्वान् द्वितीय मेखलोपरि ॥२१॥
नेत्र वेदांङ्गुलोपेताः कुण्डेष्वन्येषु वर्धयेत् ।
यवद्वयप्रमाणेन नाभि पृथगुदारधीः ॥२२॥

नाल तथा मेखला के मध्य में परिधि स्थापनार्थ छिद्र करे। द्वितीय मेखला के ऊपर भी विद्वान व्यक्ति छिद्र करें। अन्य कुण्ड में ३ और ४ अंगुल वर्धन करें। यवद्वय परिमाण में पृथक् नाभी कही गयी है ॥ २१–२२ ॥

योनिकुण्डे योनिमध्यकुण्डे नाभिञ्च वर्जयेत् ।
नाभिक्षेत्रं त्रिधा कृत्वा मध्ये कुर्वीत कर्णिकाम् ॥२३॥

योनिकुण्ड में योनि का तथा पद्मकुण्ड में नाभि का वर्जन करें। नाभिदेश का तीन भाग करके उसमें (मध्य में) कर्णिका निर्माण करें ॥२३॥

बहिरंशद्वयेनाष्टौ पत्राणि परिकल्पयेत् ।
इन्द्राग्नि यमदिक्कुण्डे योनिः सौम्यमुखी स्मृता ॥२४॥

बाह्य अंशद्वय की अष्ट पत्र रूप कल्पना करना चाहिए। इन्द्र (पूर्व), अग्नि (पूर्व तथा दक्षिण का मध्य कोण) तथा यम (दक्षिण) दिशा के कुण्ड में योनि को सौम्यमुखी कहा गया है ॥२४॥

योनिः पूर्वमुखान्येषु पूर्वेशान्येतरे स्मृता ।
हस्तमात्रस्थण्डिलं वा संक्षिप्ते होमकर्मणि ॥२५॥
अंगुलोत्सेध संयुक्तं चतुरस्त्रं समन्ततः ।
आदाय दक्षिणे पाणौ श्रुवं त्रिमधुरं हविः ॥२६॥
प्राङ्मुखो वन्हिजायान्तो जुहुयात् न्युब्जपाणिना ।
नमोऽस्तेन नमो दद्यात् स्वाहान्ते द्विठमेव च ॥२७॥
पूजायामाहुतौ चापि सर्वत्रायं विधिः शिवे ।
एवंम्प्रकारो देवेशि कथितो होम निर्णयः ।
गुह्यात् गुह्यतमं देवि सुखमोक्षप्रदं नृणाम् ॥२८॥

योनिकुण्ड पूर्वाभिमुखी होगा तथा अन्यान्य पूर्वेशानी (पूर्व तथा ईशान-कोणस्थ) होंगें। संक्षिप्त होमकर्म में एक हाथ मात्र का स्थण्डिल होगा। चारो ओर एक अंगुल ऊँचा चतुष्कोण होगा। दक्षिण हाथ की ओर त्रिमधुर (मधु-

घृत-शर्करा) हवियुक्त स्त्रुक लेकर पूर्वमुख होकर स्वाहा मंत्र से न्युब्जपाणि (हाथ नीचे करके) होकर होम करे। अन्त में नमः अथवा स्वाहा कहकर अग्नि को अर्पित करे।

हे शिवे! पूजा तथा आहुति की यही विधि सर्वत्र है। हे देवेश! इस प्रकार होम निर्णय किया जाता है। हे देवी! यह गुह्य होने पर भी गुह्यतम हैं और मानव के लिये सुख तथा मोक्ष का प्रदाता है ॥२५-२८॥

। इति महामायातन्त्रे नवमः पटलः ।

महामायातंत्र नवम पटल समाप्त

दशमः पटलः

[मन्त्रसिद्धे लक्षणम्]

श्री देव्युवाच—

नमस्यामि नमस्यामि देवदेव महेश्वर ।
इदानीं ब्रूहि मे नाथ मन्त्रसिद्धेस्तु लक्षणम् ॥१॥

श्री महादेव उवाच—

शृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि मन्त्र सिद्धिफलं शुभम् ।
मनोरथानामक्लेशः सिद्धेरुत्तमलक्षणम् ॥२॥
मृत्युनां हरणं तद्वत् देवतादर्शनस्तथा ।
प्रयोगाक्लेशसिद्धिश्च सिद्धेस्तु लक्षणं परम् ॥३॥

(मन्त्र सिद्धि का लक्षण)

देवी कहती हैं—हे देवदेव, महादेव ! आपको पुनः पुनः नस्कार ! हे नाथ ! अब मन्त्रसिद्धि का लक्षण वर्णन करिये ॥१॥

श्री महादेव कहते हैं—हे प्रिये ! मंत्रसिद्धि का शुभलक्षण सुनो । मनोवांछासमूह की अनायास सिद्धि ही मंत्रसिद्धि का उत्तम लक्षण है । मृत्युनाश, देवताओं के साक्षात्कार की प्राप्ति तथा अनायास प्रयोग के द्वारा वांछित फललाभ भी मंत्रसिद्धि का लक्षण है ॥२–३॥

परकाय प्रवेशञ्च पुरप्रवेशनं तथा ।
उर्ध्वोत्क्रमणभावं हि चराचरपुरे गतिः ॥४॥
खेचरीमेलनञ्चैतत् तत्कथाश्रवणादिकम् ।
भूच्छिद्राणि प्रपश्येत्तु तदुत्तमस्य लक्षणम् ॥५॥

परकाय प्रवेश, दूसरे की नगरी में प्रवेश, चराचर समस्त स्थानों में जाने की क्षमता, आकाशचारियों से मिलन, भगवत्कथा श्रवणादि में रुचि, भूच्छिद्र प्रभृति का दर्शन उत्तमा मंत्रसिद्धि का लक्षण कहा जाता है ॥४–५॥

नृपाणां तद्गणानाञ्च वशीकरणमुत्तमम् ।
सर्वत्र सर्वकालेषु चमत्कारः करः सुखी ॥६॥
रोगोपहरणं दृष्ट्या विषापहरणस्तथा ।
ख्यातिर्वाहनभूषादि लाभः सुचिरजीवनम् ॥७॥
पाण्डित्यं लभते मन्त्री चतुर्विधमयत्नतः ।
वैराग्यञ्च मुमुक्षुत्वं त्यागिता सर्ववश्यता ॥८॥

राजा तथा राजकर्मचारीगण का वशीकरण, सर्वत्र चमत्कारी कार्यक्षमता, स्वयं सुखी होना, रोगनाश, विपनाश तथा भूतप्रेतादि की पापदृष्टि का नाश करने की क्षमता, ख्याति, वाहनभूषणादि लाभ, दीर्घजीवन, पाण्डित्य, चारो-वेदों का विना प्रयत्न रहस्यज्ञान, वैराग्य, मुमुक्षत्व, त्याग तथा सर्वजन वशी-करण की शक्ति मध्यमसा मंत्रसिद्धि का लक्षण है ॥६-८॥

अष्टांगयोगाभ्यासनं भोगेच्छापरिवर्जनम् ।
सर्वभूतेष्वनुकम्पा सर्वज्ञादि गुणोदयः ॥९॥
इत्यादि गुणसम्पत्तिर्मध्यसिद्धस्तु लक्षणम् ।
महैश्वर्यं बलित्वञ्च पुत्रदारादिसम्पदः ॥१०॥
अधमाः सिद्धयः प्रोक्ता मंत्रीणां प्रथमभूमिकाः ।
सिद्धमंत्रस्तु या साक्षात् स शिवो न संशयः ॥११॥

अष्टांग योगाभ्यास, भोगेच्छा विवर्जन, सर्वभूतों पर दया, सर्वज्ञता प्रभृति गुण समूह तथा तदनुरूप अन्यान्य गुणसम्पत्ति का लाभ, यह भी मध्यमा मंत्र-सिद्धि का लक्षण कहा गया है ।

महान ऐश्वर्य, दैहिक शक्ति, पुत्रादि की प्राप्ति को मंत्र साधकों की प्राथमिक एवं अधमा सिद्धि कहा गया है । जो उत्तमा मंत्रसिद्धि युक्त है, वह साक्षात् शिवतुल्य है । यह निःसंदिग्ध रूप से सत्य है ।

। इति महामायातंत्रे दशमः पटलः ।

। महामायातंत्र दशम पटल समाप्त ।

एकादशः पटलः

(पुरश्चरण विधि मन्त्रसिद्धेरूपाश्च)

श्री महादेव उवाच—

पुरश्चर्याविधिं देवि इदानीं कथयामि ते ।
स्नातः शुक्लाम्बरधरः शुचिः पूर्वमुपोषितः ॥१॥

जपेदेकाग्रमनसा गायत्रीमयुतं यथा ।
देव्यां कीलकमारोप्य पूजयेत् कीलकोपरि ॥२॥

द्वादशांङ्गुलमितं काष्ठमुडुम्बरभवं प्रिये ।
तस्योपरि यजेद्देवी ग्रहान्भूतांश्चभैरवान् ॥३॥

जयदुर्गां गणेशञ्च विष्ण्वीशान लोकपालकान् ।
ततो भुक्त्वा हविष्यान्नं ततः परदिने जपेत् ॥४॥

(पुरश्चरणविधि तथा मंत्रसिद्धि का उपाय)

शंकर कहते हैं—हे देवी ! अब मैं तुमको पुरश्चरण विधि का उपदेश देता हूँ ।

स्नान करके शुल्कवस्त्र पहने, तदनन्तर पूर्वाभिमुख होकर बैठे। पूर्वाभिमुख स्थिति में दस हजार जप करें । द्वादशांगुल नाप के लकड़ी के (गूलर वृक्ष की लकड़ी) कीलक को रोपित करें। उसपर महामाया को स्थापित करके पूजन करें। इस कीलक पर नवग्रह, पञ्चभूत, भैरवादि, जयदुर्गा, गणेश, विष्णु, ईशान तथा लोकपालों का पूजन करें। इसके अनन्तर हविष्यान्न भक्षण करें। पश्चात् जप आरम्भ करें ॥ १–४ ॥

कृतसंकल्प एवासौ पूजयेत् परमेश्वरीम् ।
प्रातःकालं समारभ्य जपेन्मध्यन्दिनावधौ ॥५॥

न्यूनाधिकं न जप्तव्यं देवताभावसिद्धये।
युगभेदे विधानं हि कथयामि शृणुष्व तत् ॥६॥

विशेष—भैरवादि आठ हैं, यथा—असितांगभैरव, रूरूभैरव, चण्डभैरव, क्रोधोन्मत्त भैरव, भयंकर भैरव, कपाली भैरव, भीषण भैरव तथा संहार भैरव।

जपारम्भ के पूर्व संकल्प द्वारा महामाया पूजन करें। तदनन्तर प्रातःकाल से आरम्भ करके संख्या से कम या अधिक जप न करें। युगभेद से जप संख्या जिस प्रकार से निर्दिष्ट है, वह कहता हूँ, श्रवण करो ॥ ५-६ ॥

सत्येद्वादशलक्षन्तु त्रेतायांञ्च त्रिलक्षकम्।
चतुर्लक्षं द्वापरे च एकलक्षं कलौ जपेत् ॥७॥

सत्ययुग में १२ लाख, त्रेता में तीन लाख, द्वापर में चार लाख तथा कलिकाल में एक लाख जप करना विहित है ॥७॥

एवंविधं जपं कृत्वा होमयेज्ज्वलदग्निके।
दशांशं परमेशानि तद्दशांशन्तु तर्पयेत् ॥८॥
तद्दशांशाभिषेकञ्च ब्राह्मणान् भोजयेत्तथा।
गुरवे दक्षिणां दद्यात् विभवस्यानुरूपतः ॥९॥
एतत् कल्पान्महेशानि मंत्रः सिद्ध्यति निश्चितम्।
सिद्धमंत्रन्तु यः साक्षात् स शिवो नात्रसंशयः ॥१०॥

इस प्रकार जप समाप्त हो जाने पर प्रदीप्त अग्नि में दशमांश संख्यक होम करें। हे देवी! तदनन्तर होम संख्या का दशमांश तर्पण तथा तर्पण का दशमांश अभिषेक करें। तर्पण की दशमांश संख्या के ब्राह्मणों को भोजन करायें। इसके पश्चात् गुरु को अपनी शक्ति के अनुसार दक्षिणा प्रदान करें। हे महेशानी! इस पद्धति के अनुरूप कार्य करना चाहिए, तभी मंत्रसिद्धि प्राप्त होती है। मंत्रसिद्ध व्यक्ति साक्षात् शिवतुल्य होता है ॥८-१०॥

पुनरनुष्ठिते मंत्रे यदि सिद्धिर्नजायते।
पुनस्तेनैव कर्त्तव्यं साधकैः स्थिरमानसैः ॥११॥

ततो यदि न सिद्ध्येत तदुपायं शृणुष्व मे ।
श्रीबीजं पुटितं कृत्वा जपेदयुतमानतः ॥१३॥
अथवा परमेशानि प्रणवेनपुटीकृतम् ।
जपेद्दशसहस्त्रन्तु ततो सिद्धो भवेन्मनुः ॥१४॥
सिद्धे मनौ ततः कुर्यात् प्रयोगं परमेश्वरि ।
इति ते कथितं देवि गुह्याद्गुह्यतमं प्रिये ।
यस्मै कस्मै न दातव्यं प्राणसंशयसंभवे ॥१५॥

यदि यथायथरूप से इस प्रकार से अनुष्ठान करने पर भी सिद्धि न मिले; उस स्थिति में पुनः इसी प्रकार अनुष्ठान करें। द्वितीय वार में भी सिद्धि अप्राप्त रहने पर पुनः तृतीय वार स्थिर चित्त से अनुष्ठान करें। यदि इसी प्रकार तृतीय बार में भी सिद्धि अप्राप्त रहे, उस स्थिति में प्रणव (ॐ) अथवा श्रीबीज (श्रीं) द्वारा मंत्र को पुटित करके दशसहस्त्र मंत्र जप करें। इससे मंत्र सिद्ध हो जाता है।

मंत्रसिद्धि के अनन्तर उसका प्रयोग करें। हे देवी ! गुप्त से गुप्ततम होने पर भी यह विद्या तुमसे कहा है। प्राणों पर विपत्ति आने पर भी यह विद्या किसी को प्रदान नहीं करना ! ॥१२-१५॥

॥ इति महामायातंत्रे एकादशः पटलः ॥
। महामायातंत्र एकादश पटल समाप्त ।

द्वादशः पटलः

(साधने विविधभावः लतासाधनञ्च)

श्री महादेव उवाच—

शृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि योगसाधनमुत्तमम् ।
विना भावेन देवेशि न सिद्धब्ते कदाचन ॥१॥

त्रिधा भावो महेशानि साधकानां सुखप्रदः ।
परं मुक्तिमवाप्नोति भावस्थः साधकाग्रणीः ॥२॥

पशुभावस्थितो मंत्रः बहुक्लेशेन सिद्ध्यति ।
दिव्यभावयुतो देवि साक्षात् गंगाधरः स्वयम् ॥३॥

(साधन के विभिन्नभाव, लता साधन)

शंकर कहते हैं—हे प्रिये ! मैं अति उत्तम मंत्रयोग साधन पद्धति कहता हूँ, सुनो ! हे देवेशी ! यथाविहित भाव के अभाव में मंत्रसिद्धि नहीं होती ।

हे देवी ! मंत्रसाधकों के लिए त्रिविधभाव सुखप्रद होते हैं । यथायथ रूप से भाव का अवलम्बन लेने से साधकगण मुक्ति के अधिकारी हो जाते हैं । पशुभाव का अवलम्बन लेने से अत्यन्त क्लेश से साधना में सिद्धि मिलती है । दिव्यभावयुक्त साधक शिवतुल्य हो जाते हैं ॥१-३॥

वीरभावस्थितो मन्त्रः कलौवाशु सुसिद्ध्यति ।
दिवा हविष्यं भोक्तव्यं पुराणश्रवणादिकम् ॥४॥

रात्रौ शक्तियुतो मन्त्री पञ्चमेन प्रपूजयेत् ।
लतासाधनं देवेशि साधकस्य सुनिश्चितम् ॥५॥

वीरभाव का अवलम्बन लेकर साधना करने से कलिकाल में मन्त्रसमूह त्वरितरूप से सुसिद्ध हो जाते हैं । वीरसाधक दिन में हविष्य भोजन करें तथा

पुराणादि शास्त्र ग्रन्थ सुने अथवा पाठ करके समय व्यतीत करें। रात्रि में वीरसाधक शक्तियुक्त होकर पंचतत्त्व के द्वारा महामाया का पूजन करें। हे देवेशी ! वीरसाधक लतासाधन को प्रधान साधन मानते हैं ॥४–५॥

मातृभावेन संम्पूज्य जपेदेकाग्रमानसः।
कालीवदाचरेद्विद्यां कालीवत् पूजयेत् सदा ॥६॥
कालीवत् साधयेद्देवीं कालीवत् चिन्तयेत् सदा।
या काली सा महादुर्गा या दुर्गा सैव तारिणी ॥७॥
दुर्गायाः कालिकायाश्च ध्यानं सममिहोदितम्।
अभेदेन यजेद्देवीं सिद्ध्योऽष्टौ भवन्ति हि ॥८॥

साधक को कुल शक्ति की मातृभावना से पूजा करना चाहिए। कुल शक्ति के साथ काली के समान आचरण करें। कुल शक्ति को काली मानकर पूजन करें। कुलशक्ति के प्रति कालीवत् चिन्तन करें। कालीवत् मानकर साधना करें। जो काली हैं, वे ही महादुर्गा हैं। जो दुर्गा हैं, वे ही तारिणी (तारा) हैं। वीराचार में दुर्गा तथा काली के ध्यान को समान ही मानते हैं। दुर्गा तथा काली में अभेद ज्ञान प्रतिष्ठित होने पर अष्टसिद्धि प्राप्त हो जाती है ॥६–८॥

अन्तर्याग बहिर्याग रतो मंन्त्री प्रपूजयेत्।
पूर्वोक्तं दूषितो मन्त्रः सर्वं सिद्ध्यति निश्चितम् ॥९॥
कुलीनः सर्वमंत्राणां जापकः परिकीर्तितः।
कुलीनः सर्वशास्त्राणां अधिकारीति गीयते ॥१०॥
कुलीनः परदेवीनां सदा प्रियतमः प्रिये।
कुलाचारात् परं नास्ति कलौ देवी सुसिद्धये ॥११॥

साधक अन्तर्याग तथा बहिर्याग द्वारा देवी की पूजा करें। इससे दूषित मंत्र भी सिद्ध हो जाते हैं। कुलीन (कौल साधक) सभी मंत्रों का जप क

के अधिकारी हैं। कुलीन ही समस्त शास्त्रों का अधिकारी है। हे प्रिये! कौलसाधक आद्याशक्ति के प्रियतम पात्र होते हैं। शक्तिसाधना हेतु कलिकाल में कुलाचार की अपेक्षा कोई भी अन्य उपाय श्रेष्ठ नहीं है ॥९-११॥

(लता साधनम्)

लतायां साधनं वक्ष्ये शृणुष्व हरवल्लभे।
शतं केशे शतं भाले शतं सिन्दूरमण्डले ॥१२॥
स्तनद्वन्द्वे शतद्वन्द्वं शतं नभौ महेश्वरि।
शतं योनौ महेशानि उत्थाय च शतत्रयम् ॥१३॥
एवं दशशतं जप्त्वा सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥१४॥

हे देवी! मैं लता (नायिका) के सहयोग से साधना पद्धति का उपदेश देता हूँ। श्रवण करो! कुलशक्ति (नायिका) के केश में सौबार, कपाल में १०० बार, सिन्दूर मण्डल में १०० बार, प्रत्येक स्तन में १०० बार, योनि में १०० बार तथा उसके साथ रतिकाल में ३०० बार, इस प्रकार एक सहस्त्र मंत्र जप करें। साधक सर्वसिद्धि प्राप्त करता है।

(प्रकारान्तर)

अथान्यत् संप्रवक्ष्यामि साधनं भुवि दुर्लभम्।
रजोऽवस्थां समानीय तद्योनौ स्वेष्टदेवताम् ॥१५॥
पूजयित्वा महारात्रौ त्रिदिनं प्रजपेन्मनूम्।
शतत्रयञ्च षट्त्रिंशदधिकं प्रत्यहं जपेत्।
शवसाधनसहस्त्रस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयः ॥१६॥

अब मैं अन्य प्रकार से इस संसार दुर्लभ साधन को कहता हूँ। रजस्वला कुल युवती को लाये। उसकी योनिपीठ पर अपने इष्टदेवता का महारात्रि में पूजन करें। तत्पश्चात् तीन दिन तक प्रतिदिन ३३६ संख्या में मंत्र जप करें। इसके द्वारा सहस्त्र शवसाधन का फल प्राप्त होता है ॥१५-१६॥

(प्रकारान्तर)

अथान्यत् साधनं वक्ष्ये सावधानावधारय ।
परकीयलताचक्रे संम्पूज्य स्वेष्टदेवताम् ॥१७॥
अष्टोत्तरशतं पूर्वं चतुर्वर्गे जपेद्बुधः ।
ततस्तां नरभिः पुष्पै र्यजेदेष्टोत्तरं शतम् ॥१८॥
ततः पूर्णाहुतिं दत्वा जपेदष्टोन्तरं शतम् ।
धनवान् बलवान् वाग्मी सर्व योषित्प्रियंकरः ॥१९॥
षोड़शाहेन च भवेत् सत्यं सत्यं न संशयः ।
समयाचारनिरतः सदा तद्गतमानसः ॥२०॥
किं तस्य पापपुण्यानि येन देवी समर्चिता ।
केवलं निशि जापेन मंत्रः सिद्ध्यति निश्चितम् ॥२१॥
वृथा न गमयेत् कालं दुरालापादिनां सुधीः ।
गमयेत् साधकश्रेष्ठा कवचादि प्रपाठतः ॥२२॥
परोपकारनिरतः सदाह्लादमनः सुधीः ।
गोपयेत् सततं देवि कुलमार्गं विशेषतः ॥२३॥

अब मैं अन्य प्रकार का लता साधन कहता हूँ। एकाग्रचित्त से श्रवण करो। प्रथमतः चतुर्वर्ग सिद्धि के लिए १०८ बार मंत्र जप करें। तदनन्तर परकीय लताचक्र में (योनि पर) अपने इष्ट देवता का पूजन करें। तदनन्तर १०८ बार नवीन पुष्प से महामाया की पूजा करें। पूर्णाहुति प्रदान करके १०८ मंत्रजाप करें। समयाचार परायण होकर महामाया के प्रति सर्वदा तद्गत् चित्त होकर १६ दिन तक उक्त रूप से साधना करने से धन, बल; वाग्मिता, सर्वस्त्रीप्रियता तथा कवित्व प्राप्त होता है। यह निःसंदिग्ध तथा सत्य है।

जो व्यक्ति महामाया की अर्चना करता है, उसे पाप क्या और पुण्य क्या ? केवल रात्रि में ही जप करें। इस साधना काल में साधक कभी भी

दुष्टालाप आदि अकार्य न करें। केवल महामाया का स्तवन तथा कवचादि पाठ करते हुए समय व्यतीत करें।

सुधी साधक साधनाकाल में सदा परोपकार में लगा रहे और आल्हादित, प्रसन्न चित्त रहे। हे देवी! यह कुलाचर सर्वदा गोपनीय रखना चाहिये ॥१७–२३॥

(पूजाधारः)

इदानीं शृणु देवेशि पूजाधारं विशेषतः।
जले मंत्रे शिलायान्तु बिल्वमूले घटोपरि ॥२४॥

लिंगेयोनौ महापीठे शून्यागारे चतुष्पथे।
कुट्टनीगृहमध्ये च कदलीमण्डपे तथा ॥२५॥

पुष्पयुक्ते भगे देवि गणिकागेहमध्यतः।
महारण्ये प्रान्तरे च शवे च शक्तिसंगमे ॥२६॥

पंञ्चानन्दपरो भूत्वा साधयेत् सकलेप्सितान्।
यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् ॥२७॥

हे देवी! अब पूजा का आधार बतलाता हूँ, श्रवण करो। जल में, यंत्र; शिलामध्य में, बिल्वमूल में, घट के ऊपर, शिवलिङ्ग, योनिपीठ, महापीठ; शून्यगृह, चतुष्पथ में (कल्याणप्रदा देवी मन्दिर में), कुटनी के गृह में; केले के मण्डप में, ऋतुकाल के रक्त से युक्त योनि पर, गणिका (वेश्यालय) गृह में; महान वन में, प्रान्तर में, शवदेह पर अथवा शक्ति (नायिका) से युक्तावस्था में (रतिकाल में) महामाया पूजन करें। इस प्रकार पूजन करने पर साधक के सभी अभीष्ट सिद्ध हो जाते हैं। साधक जो भी कामना करता है, उसका काम्यविषय निश्चय प्राप्त हो जाता है ॥२४–२७॥

नूनं तद्गृहमागत्य कुबेरो वीयते वसुः।
वातस्तंम्भ जलस्तम्भं गतिस्तम्भं विवस्वतः ॥२८॥

वन्हे शैत्यं करोत्येवं महामायाप्रासादतः।
नासाध्यं विद्यते तस्य त्रैलोक्येऽपि च सुन्दरि ॥२९॥

कुबेर भी उस साधक के गृह में आकर उसे धनवान कर देते हैं। वह व्यक्ति वायुस्तम्भन, जलस्तम्भन तथा गतिस्तम्भन में पटु हो जाता है और महामाया की कृपा से अग्नि को भी शीतल कर देता है। हे देवी! उसके लिए कुछ भी असाध्य नहीं रह जाता ॥२८-२९॥

योनिकुण्डे कृते होमे साक्षात् गंगाधरो भवेत्।
पूजास्थाने कामबीजं लिखित्वा शिवयोजयेत् ॥२९॥

कवचं प्रपठेद् यस्तु शतावृत्तं सुरेश्वरि।
वाग्मी भवति मासेन सत्यं सत्यं न संशयः ॥३०॥

अचिराल्लभते देवि कविता सुखशालिनीम्।
मोदते सर्वलोकेषु शिववत् परमेश्वरि ॥३१॥

इति ते कथितं देवि सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
प्रकाशितं तव स्नेहात् न प्रकाश्यं कदाचन ॥३२॥

योनिकुण्ड में होम द्वारा साधक गंगाधर शिव के समान हो जाता है। पूजा स्थान में शिव (ॐ) युक्त कामबीज (क्लीं) अर्थात् ॐ क्लीं लिखे। वह व्यक्ति एक मास पर्यन्त प्रतिदिन १०० बार कवच पाठ करें। हे देवी! वह व्यक्ति मासान्त में वाग्मी हो जाता है। यह सत्य वचन है। वह व्यक्ति मनोमुग्धकारी कवित्व शक्ति प्राप्त कर लेता है। हे परमेश्वरी! वह व्यक्ति सर्वलोकों में शिव के समान अवस्थान कर सकता है। हे देवी! तुमको यह उपदेश दिया है जो अन्य किसी भी तंत्र में अंकित नहीं है। यह समस्त तंत्रों में गोपित हैं। केवल तुम्हारे प्रति स्नेह के कारण इसका प्रकाशन किया है। इसे कभी भी किसी से नहीं कहना ॥२९-३२॥

दुर्गामन्त्ररतः पुन्सो योषिद्भूति विवर्धनी।
अन्यथा सा भवेत् क्रुद्धा धनमायुष्यनाशयेत् ॥३३॥

दुर्गा मंत्ररत साधक सर्वथा स्त्री समूह का आनन्दवर्धन करें अन्यथा उनके क्रुद्ध हो जाने पर साधक का धन तथा आयुष्य नष्ट हो जाता है ॥३३॥

वृथान्यासो वृथा पूजा वृथा जापो वृथा स्तुतिः ।
वृथा सदक्षिणा होमो यश्चाप्रियकरः स्त्रियाः ॥३४॥

स्त्री समूह का अप्रिय करने वाले साधक का न्यास, पूजा, जप, स्तुति; दक्षिणा सहित होम आदि सब निष्फल हो जाता है ॥३४॥

बुद्धिर्बलं यशो रूपमायुर्वित्तं सुतादयः ।
तस्य नश्यन्ति सर्वाणि योषिन्निन्दापरस्य च ॥३५॥

नारी निन्दापरायण साधक की बुद्धि, बल, यश, रूप, आयु, धन एवं पुत्रादि नष्ट हो जाते हैं ॥३५॥

मातापित्रोर्वरं त्यागस्त्याज्यः स्वशंम्भुस्तथा हरिः ।
वरं देवी परित्याज्या नैव त्याज्यो स्वकामिनी ॥३६॥

माता, पिता, विष्णु, शिव अथवा देवी का भी परित्याग कर दें परन्तु अपनी कामिनी का परित्याग न करे ॥३६॥

वरं जनमुखान्निन्दा वरं वा गर्हितं यशः ।
वरं प्राणः परित्यज्या न कुर्यादप्रियं स्त्रियाः ॥३७॥

जनगण से निन्दा सुनना पड़े, निन्दित होना पड़े, प्राण का भी परित्याग करना पड़े तथापि स्त्रीगण का अप्रिय कार्य न करे ॥३७॥

न धाता नाच्युतः शम्भुर्न च वा सा सनातनी ।
योषिदप्रियकर्त्तारं रक्षितुञ्च क्षमो भवेत् ॥३८॥

स्त्रियों का अप्रिय कार्य करने पर ब्रह्मा, विष्णु, शंम्भु अथवा महामाया भी उसकी रक्षा नहीं कर सकते ॥३८॥

दुर्गार्चने रतो देवि महापातकसङ्कुलैः ।
दोषैर्न लिप्यते देवि पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥३९॥

हे देवी ! जैसे पद्मपत्र में जल नहीं लगता, उसी प्रकार दुर्गार्चन में लगे व्यक्ति को महापातक भी नहीं लग सकता ॥३९॥

॥ इति महामायातंत्रे द्वादशः पटलः ॥

। महामायातन्त्र द्वादश पटल समाप्त ।

त्रयोदश पटलः

श्री देव्युवाच

भुवनेशी मनुप्रोक्तं मायाबीजात्मकं प्रिय।
श्रुतं तव मुखाम्भोजात् इदानीं कवचं वद ॥१॥

देवी कहती हैं—हे महादेव ! आपने ह्रीं बीज युक्त भुवनेश्वरी मन्त्र कहा है। अब आपके मुखकमल से उनके कवच का श्रवण करने की इच्छा है ॥१॥

श्री महादेव उवाच—

शृणु प्रिये प्रवक्ष्यामि कवचं भुवि दुर्लभम्।
यस्यापि पठनाद्देवि सर्वसिद्धीश्वरो भवेत् ॥२॥
इन्द्रोऽपि धारणाद् यस्य प्राप्नुयाद् वज्रमुत्तमम्।
कृष्णेन पठितं देवि भूभारहरणाय च ॥३॥
शुकदेवोऽपियद्धृत्वा सर्वयोगविशारदः।
अस्य श्रीभुवनेश्वरी कवचस्य महेश्वरी ॥४॥

श्री शंकर कहते हैं—हे प्रिये ! मैं भुवनदुर्लभ कवच कहता हूँ, श्रवण करो। हे देवी ! इस कवच का पाठ करने से साधक सर्वसिद्धि प्राप्त करते हैं। इन्द्र ने इस कवच का पाठ करके उत्तम वज्र प्राप्त किया था। श्रीकृष्ण ने भी भूभार हरण करने के लिए इस कवच का पाठ किया था। इसी कवच को धारण करके शुकदेव सर्वयोग विशारद हो गये थे ॥२–४॥

सर्वार्थे विनियोगः स्यात् प्राणायामं ततश्चरेत्।
मायाबीजं शिरः पातु कामबीजन्तु भालकम् ॥५॥

दुर्गाबीजं नेत्रयुग्मं नासिकामन्नदामनुः ।
वदनं दक्षिणाबीजं ताराबीजं तु गण्डकम् ॥६॥
षोडशी मे गलं पातु कण्ठ मे भैरवीमनुः ।
हृदयं छिन्नमस्ता च उदरं बगला तथा ॥७॥

यह कवच सर्वार्थ सिद्धि के लिए प्रयुक्त होता है। विनियोग के पश्चात् प्राणायाम करे। माया बीज मेरे शिरः का तथा काम बीज मेरे चक्षुद्वय का, अन्नदामन्त्र ललाट का, दुर्गाबीज नासिका का रक्षण करे। दक्षिणा कालिका-बीजमन्त्र मुख की तथा ताराबीज गण्डद्वय की रक्षा करे। षोडशी गलप्रदेश की तथा भैरवी मन्त्र कंठदेश की रक्षा करे। छिन्नमस्ता हमारे हृदय की तथा बगला उदर की रक्षा करे ॥५-७॥

धूमावती कटिं पातु मातंगी पातु सर्वतः ।
सर्वाङ्गं मे सदा पातु सर्वविद्यास्वरूपिणी ॥८॥

धूमावती कटि देश का तथा मातंगी सर्व स्थान का रक्षण करे। सर्वविद्या स्वरूपिणी देवी सर्वाङ्ग की रक्षा करें ॥८॥

इत्येतत् कवचं देवि पठनात् धारणादिकम् ।
कृत्वा तु साधक श्रेष्ठो विद्यावान् धनवान् भवेत् ॥९॥
पुत्रपौत्रादि सम्पन्नो ह्यन्ते याति परांगतिम् ।
इदं तु कवचं गुह्ये साधकाय प्रकाशयेत् ॥१०॥
न दद्यात् भ्रष्ट-दुष्टाय परदाररताय च ।
इदं तन्त्रं महेशानि त्रिलोकेषु च गोपितम् ॥११॥
सर्व सिद्धिकरं साक्षात् महापातकनाशनम् ।
कल्पद्रुमसमं ज्ञेयं पूजनात् प्रियमाप्नुयात् ॥१२॥

हे देवी ! इस कवच का पाठ करने पर तथा धारण करने पर श्रेष्ठ विद्या तथा धन की प्राप्ति होती है। व्यक्ति पुत्र-पौत्रादि सम्पन्न होकर अन्त में मुक्ति

प्राप्त करता है। यह गुप्त कवच साधकों के लिए प्रकाशित कर रहा हूँ। साधन भ्रष्ट; दुष्ट अथवा परस्त्रीगामी को यह कवच नहीं देना चाहिए। हे देवी! स्वर्ग, मर्त्य, पाताल में, सर्वत्र, यह तन्त्र अप्रकाशित है। यह तन्त्र सर्वसिद्धि-प्रद तथा महापातक नाश करने वाला है। इसे कल्पतरु के समान जानकर पूजन करने से साधक को श्री प्राप्ति होती है ॥९-१२॥

पाठना द्धारणात् सर्वं पापं क्षयति निश्चितम्।
विवादे जयमाप्नोति धनैर्धनपति भंवेत् ॥१३॥
यं यं वांञ्छति तत् सर्वं भवत्येव न संशयः ॥१४॥

इस कवच का पाठ करने तथा धारण करने से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और वह व्यक्ति विवादों में जय प्राप्त करता है। धन में वह कुवेर के समान हो जाता है। इसके अतिरिक्त जो कुछ की भी कामना करता है, वह भी प्राप्त होती रहती है। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है ॥१३॥

॥ इति महामायातंत्रे त्रयोदश पटलः समाप्त ॥

॥ महामायातन्त्र त्रयोदशपटल समाप्त ॥